www.jagran.com राष्ट्रीय संस्करण
दैनिक जागरण
शनिवार 6 जुलाई, 2024

दैनिक जागरण

आत्मा स्वयं को परमात्मा से जोड़ने वाली कड़ी है

ढहता आधारभूत ढांचा

यह अच्छा हुआ कि बिहार सरकार ने एक के बाद एक पुल गिरने की घटनाओं को देखते हुए अनेक इंजीनियरों को निलंबित कर दिया। इस तरह की कार्रवाई इसलिए आवश्यक थी, क्योंकि पुलों के गिरने का सिलसिला थमने का नाम नहीं ले रहा था। यह सामान्य बात नहीं कि महज 15 दिनों के अंदर एक दर्जन पुल गिर जाएं। बिहार में इसके पहले भी कई पुल गिर चुके हैं। एक-दो पुल तो ऐसे रहे, जो निर्माणाधीन स्थिति में ही ध्वस्त हो गए। इसे देखते हुए यह आवश्यक था कि बिहार सरकार कोई ठोस कदम उठाती। उसने कई विभागों के इंजीनियरों को निलंबित करने के साथ ही पुलों का निर्माण करने वाली कंपनियों को कारण बताओ नोटिस जारी करते हुए उनका भुगतान रोकने की पहल की है। उसने कंपनियों से यह भी पूछा है कि क्यों न उन्हें काली सूची में डाल दिया जाए? यदि ऐसी कंपनियों की गलती पाई जाती है तो उन्हें न केवल काली सूची में डाला जाना चाहिए, बल्कि उन पर जुर्माना लगाने के साथ ही यह भी देखा जाना चाहिए कि वे नाम बदलकर फिर से सक्रिय न होने पाएं। यह तो किसी जांच से ही सामने आएगा कि नए-पुराने पुल इतनी जल्दी-जल्दी क्यों गिरते रहते हैं, लेकिन इसकी भरी-पूरी आशंका है कि इसके पीछे एक बड़ा कारण दोयम दर्जे का निर्माण है। यह समस्या केवल बिहार की ही नहीं, बल्कि पूरे देश की है। पिछले ही दिनों झारखंड से यह खबर आई कि वहां सुंदर नदी पर बना पुल उद्घाटन से पहले ही धंसने लगा। इस तरह के मामले देश के अन्य हिस्सों से भी सामने आते रहते हैं।

एक आंकड़े के अनुसार 2012 से 2021 के बीच देश के विभिन्न हिस्सों में छोटे-बड़े दो सौ से अधिक पुल गिर चुके हैं। बात केवल पुलों की ही नहीं, सड़कों, एक्सप्रेसवे और आधारभूत ढांचे से जुड़े अन्य निर्माण कार्यों की भी है। आखिर यह एक तथ्य है कि पिछले दिनों दिल्ली में अंतरराष्ट्रीय हवाईअड्डे की एक छत गिर गई। इसी तरह की घटना जबलपुर और राजकोट हवाईअड्डे पर भी हुई। वास्तव में अपने देश में बरसात का मौसम आधारभूत ढांचे की पोल खोलने का काम करता है। इससे संतुष्ट नहीं हुआ जा सकता कि जब भी कोई बड़ी घटना घटती है तो जांच के आदेश दे दिए जाते हैं, क्योंकि पुलों के गिरने और सड़कों के धंसने के मामले रह-रहकर सामने आते ही रहते हैं। इसका सीधा मतलब है कि आधारभूत ढांचे के निर्माण में लापरवाही का परिचय दिया जा रहा है। यह लापरवाही कमीशनखोरी की ओर ही साफ संकेत कर रही है। यह ध्यान रहे तो अच्छा कि आधारभूत ढांचे का तेज गति से निर्माण होने के साथ ही खराब गुणवत्ता के कारण उसके नष्ट होते रहने का सिलसिला प्रगति को थामने के साथ ही संसाधनों की बर्बादी और देश की बदनामी का भी कारण बनता है।

भ्रष्टाचार का परिणाम

बिहार और झारखंड में मानसून के शुरू होते ही लगातार पुलों के गिरने का सिलसिला शुरू हो गया। बिहार में अब तक दस से अधिक पुल ध्वस्त हो गए हैं। वहीं, झारखंड में मानसून की पहली बारिश के साथ ही निर्माणाधीन पुलों के ध्वस्त होने का सिलसिला जारी है। गिरिडीह के अरगा नदी में बारिश के पानी के बहाव में फतेहपुर-भेलवाघाटी के बीच पांच करोड़ रुपये की लागत से बन रहा निर्माणाधीन पुल ध्वस्त हो गया। इस प्रकार गोड्डा के सुंदर नदी पर पांच करोड़ रुपये की लागत से बना पुल उद्घाटन से पहले ही धंसने लगा। इस तीन साल पहले खूंटी जिले में कांची नदी पर 13 करोड़ रुपये की लागत से बने पुल का पिलर अचानक आई तेज बरसात में धंस गया। इसी क्षेत्र में पहले भी दो पुल धंस चुके थे। उन पुलों का निर्माण भी उसी कंस्ट्रक्शन कंपनी ने किया था, जिसने यह पुल बनाया था। बरसात के मौसम में बिहार की तरह झारखंड में भी पुलों के धंसने व टूटने की घटना हर साल होती है। यह कुछ घटनाएं एक बानगी है, जो विकास कार्यों में भ्रष्टाचार की कहानी को बयां कर जा रही हैं। नदियों से हो रहे बालू के अवैध खनन भी इसके लिए जिम्मेदार माने जा रहे हैं। खूंटी के पास पुल धंसने की घटना की एक वजह पुल के पिलर के पास से बालू का अवैध खनन माना जा रहा था। जिससे पिलर को मजबूती नहीं मिली और धंस गया। झारखंड में बालू घाटों की बंदोबस्ती नहीं हो पाने से अवैध तरीके से नदियों से बेतहाशा का बालू का उत्खनन किया जाता है। अवैध खनन करने वाले लोग सारे नियम-कायदे को तोड़ कहीं से भी खनन करना शुरू कर देते हैं। जो इस तरह के हादसों का मुख्य कारण बनते हैं। इससे लोगों का आवागमन प्रभावित होता है। ऐसे में जरूरत है, इस पर कड़ी कार्रवाई की।

झारखंड में भी मानसून की पहली बारिश के साथ ही निर्माणाधीन पुलों के ध्वस्त होने का सिलसिला जारी है

संविधान बदलने का फर्जी विमर्श

उमेश चतुर्वेदी

इसकी जानबूझकर अनदेखी की जा रही है कि मोदी सरकार के विगत दस वर्षों के शासन में आठ संविधान संशोधन हुए और इन सभी का समर्थन विपक्ष ने किया

बीते दिनों लोकसभा सदस्यों की शपथ के दौरान कुछ सदस्यों ने संविधान की प्रतियां भी लहराईं। संसद के भीतर और बाहर लहराई जाने वाली संविधान की इन प्रतियों का रंग भले ही अलग हो, लेकिन उद्देश्य एक था। वह यह कि संविधान बदलने के नैरेटिव को बनाए रखना। इसी नैरेटिव ने विपक्षी दलों को लोकसभा चुनाव में सफलता दिलाई और वे भाजपा को सीमित रखने में सफल रहे। नेता प्रतिपक्ष राहुल गांधी हों या अखिलेश यादव या फिर उनके अन्य साथी, वे अभी भी इसी नैरेटिव पर अटके हैं। भाजपा के चार सौ पार के नारे और कुछ नेताओं की संविधान बदलने के लिए बहुमत की जरूरत वाली टिप्पणियों के सहारे विपक्ष ने सत्ता विरोधी नैरेटिव का कोलाज रच दिया। इसका उसे फायदा भी मिला। इसलिए विपक्ष चाहता है कि यह नैरेटिव जिंदा रहे और भाजपा सवालों के घेरे में रहे। वोटरों के मन में संदेह बना रहे, ताकि विपक्षी दल आगामी विधानसभा चुनावों में वोटों की अपनी फसल काट सकें। जल्द ही महाराष्ट्र और हरियाणा में विधानसभा चुनाव होने हैं। उसके कुछ ही समय बाद झारखंड में भी चुनाव होंगे। इसलिए विपक्ष इस माहौल को भुनाए रखना चाहता है।

सवाल उठता है कि क्या भाजपा सचमुच संविधान विरोधी है? अगर वह संविधान विरोधी है तो विपक्ष ने उसके द्वारा लाए गए संविधान संशोधन प्रस्तावों का साथ क्यों दिया? लोकसभा चुनावों के दौरान भाजपा विपक्ष के संविधान वाले नैरेटिव की काट नहीं कर पाई। पता नहीं कैसे वह भूल गई कि मोदी सरकार के दस साल के कार्यकाल में हुए ज्यादातर संविधान संशोधनों को विपक्ष ने ही सहयोग-समर्थन देकर पारित कराया। मोदी सरकार के विगत दस वर्षों के शासन में आठ संविधान संशोधन हुए। दिलचस्प यह है कि इन सभी संशोधनों का समर्थन विपक्ष ने किया। मोदी सरकार ने शुरुआत में ही राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग गठित करने को लेकर संविधान संशोधन किया, जिसे समूचे विपक्ष ने समर्थन दिया था। यह बात और है कि पारित होने के तुरंत बाद ही सुप्रीम कोर्ट ने उसे खारिज कर दिया। जीएसटी लागू करने लिए भी संविधान संशोधन किया गया। इसका भी कांग्रेस समेत तकरीबन पूरे विपक्ष ने समर्थन किया था। चूंकि यह संघीय ढांचे से जुड़ा संविधान संशोधन था, इसलिए संविधान के अनुच्छेद-368 के प्रविधानों के तहत इसे कम से कम आधे या उससे ज्यादा राज्यों की विधानसभाओं का भी समर्थन मिलना जरूरी था। जीएसटी लागू करने वाले संवैधानिक संशोधन को मंजूरी विपक्षी दलों द्वारा शासित राज्य सरकारों की ओर से भी मिली।

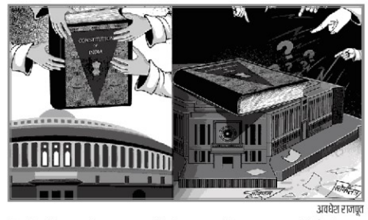

अवधेश राजपूत

मोदी सरकार का तीसरा संविधान संशोधन प्रस्ताव 'पिछड़ा वर्ग आयोग' को संवैधानिक दर्जा देने से संबंधित था। इसे भी विपक्ष का साथ मिला। आर्थिक आधार पर आरक्षण देने वाला कानून भी संविधान संशोधन के ही दायरे में आता है। इसे भी विपक्षी दलों के सहयोग से ही सरकार पारित करा पाई। संसद और विधानसभाओं में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण और एससी-एसटी आरक्षण की समयसीमा बढ़ाने वाले संविधान संशोधन को भी संसदीय मंजूरी में विपक्ष की ओर से कोई बाधा नहीं खड़ी की गई। इसी तरह राज्यों को अन्य पिछड़ा वर्ग आयोग की सूची में जातियों को जोड़ने का जो अधिकार दिया गया, वह भी संविधान संशोधन ही था। इस पर भी मोदी सरकार को विपक्षी दलों का सहयोग मिला। मोदी सरकार ने वित्त आयोग के अधिकारों में परिवर्तन को लेकर भी संविधान संशोधन प्रस्तुत किया। विपक्ष को इसे भी पारित कराने में कोई आपत्ति नहीं रही।

हालांकि सवाल यह भी है कि जब पिछड़ा वर्ग को अधिकार देने की बात हो, वित्त आयोग को और अधिकार देने की बात हो, कमजोर आय वर्ग के लोगों को सरकारी नौकरियों में आरक्षण की बात हो, तब भला कौन राजनीतिक दल इससे इन्कार कर सकता है? हमने जिस राजनीतिक व्यवस्था को अपनाया है, उसमें विरोधी दल को सत्ता पक्ष को कठघरे में खड़ा करने और वोटों की राजनीति में मात देने के लिए हर वक्त मुद्दों की तलाश रहती है। चूंकि राजनीतिक व्यवस्था में गिरावट आ गई है और दलीय वैचारिक एवं सैद्धांतिक आधार लगातार कमजोर हुए हैं, इसलिए राजनीति के लिए अधिकांश मुद्दे ऐसे तलाशे जाते हैं, जिनका हकीकत से कोई खास लेनादेना न हो। संविधान को बदलने या हटाने का नैरेटिव या मुद्दा इसी तरह का मामला है। विवादित 42वें संविधान संशोधन को छोड़ दें तो ज्यादातर मौकों पर विपक्ष और सत्ता पक्ष ने मिलकर ही संविधान संशोधन किए हैं। संविधान संशोधन का मुद्दा भी बहुत पेचीदा है। किसी भी सत्तारूढ़ राजनीतिक दल के लिए संविधान में बदलाव विपक्ष को साथ लिए बिना बहुत आसान नहीं है।

आरक्षण का नैरेटिव जिस बिंदु पर पहुंच गया है और भारत की जो जटिल जातीय संरचना है, उसमें शायद ही कोई दल होगा, जो बिना राष्ट्रीय सहमति के इस सिलसिले में कोई संवैधानिक बदलाव कर सके। केशवानंद भारती केस हो या फिर मिनर्वा मिल्स मामला, जब सर्वोच्च न्यायालय संविधान के मूल ढांचे में बदलाव न किए जाने का फैसला दे चुका है, तब ऐसी स्थिति में क्या कोई दल किसी एक सदन में बहुमत हासिल करने के बाद संविधान में आमूलचूल परिवर्तन कर पाएगा? निश्चित तौर पर इन सवालों का जवाब 'नहीं' में ही आएगा। अतीत के अनुभव भी इसी ओर इशारा करते हैं। मामले को देखते हुए सरकार ने भी इस नैरेटिव के संदर्भ में विपक्ष को आक्रामक अंदाज में जवाब देना शुरू कर दिया है।

स्वतंत्र भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था में आपातकाल ऐसा काला धब्बा है, जिसे मिटाया नहीं जा सकता। बेशक इसके लिए इंदिरा गांधी दो बार माफी मांग चुकी हैं, लेकिन यह माफी कुछ वैसी ही है, जैसे किसी की हत्या कर दी जाए और फिर माफी मांगकर अपराधबोध से मुक्ति का प्रयास हो। संविधान की प्रतियां दिखाकर सरकार पर सवाल उठाने की विपक्ष की कोशिशों को नेस्तनाबूद करने के लिए जिस तरह केंद्र सरकार ने आपातकाल का मसला उठाया है, उससे कांग्रेस असहज है। ऐसा इसलिए, क्योंकि उसके साथ खड़े ज्यादातर सहयोगी दल आपातकाल के पीड़ित रहे हैं और उस दौर में वे भाजपा के पूर्व अवतार जनसंघ के साथ खड़े रहे।

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक हैं)

response@jagran.com

उचित नहीं नीट के खात्मे की मांग

प्रो. निरंजन कुमार

यह ध्यान रहे तो बेहतर कि मेडिकल कालेजों में प्रवेश की पुरानी व्यवस्था में परेशानी का कोई ठिकाना न था

फ्रेडरिक नीत्शे का कथन है कि मूल्यांकन करना ही हमारे द्वारा मूल्यवान समझी जाने वाली सबसे मूल्यवान चीज है... मूल्यांकन के बिना अस्तित्व का सार खोखला होगा। व्यावहारिक संदर्भों में इसे समझें तो परीक्षा वह महत्वपूर्ण व्यवस्था है, जिसके द्वारा विद्यार्थियों-परीक्षार्थियों का सम्यक मूल्यांकन होता है। परीक्षा का मूल्य तब और बढ़ जाता है जब इसके माध्यम से उच्चतर पाठ्यक्रमों में प्रवेश अथवा रोजगार का मार्ग खुलता है। परीक्षा प्रणाली की शुचिता किसी भी उन्नत समाज या देश के लिए बहुत जरूरी है। दुर्भाग्य से विभिन्न राज्यों में बोर्ड परीक्षाएं हों, लोक सेवा आयोग अथवा अन्य संस्थाओं की परीक्षाएं हों, इनकी शुचिता पर सवाल उठते रहे हैं। इस कड़ी में ताजातरीन घटनाक्रम है नीट (मेडिकल प्रवेश परीक्षा), यूजीसी-नेट या सीएसआइआर परीक्षाओं को लेकर उठा विवाद, जिसने परीक्षा व्यवस्था से लोगों के विश्वास को हिलाकर रख दिया है। दुर्भाग्यपूर्ण है कि छात्रों के हित में समस्या का उचित हल निकालने की जगह इस मुद्दे पर राजनीतिक दांवपेच का खेल शुरू हो गया है। विपक्षी दल इसे रद करने की मांग कर रहे हैं। इस कड़ी में नवीनतम पेच है बंगाल की सीएम ममता बनर्जी द्वारा प्रधानमंत्री को लिखा पत्र, जिसमें नीट परीक्षा को ही समाप्त करने की मांग की गई है। ऐसी मांग कुछ और दल भी कर रहे हैं। इस मुद्दे के प्रशासनिक, तकनीकी और राजनीतिक पक्ष हैं और इसका समाधान राजनीतिक लाभ से ऊपर उठकर छात्रहित में ही होना चाहिए।

इसमें संदेह नहीं कि नीट में खासी चूक हुई है। परीक्षा एजेंसी 'नेशनल टेस्टिंग एजेंसी' (एनटीए) मुख्य रूप से कठघरे में है। हालांकि सरकार ने उचित कार्रवाई करते हुए एनटीए प्रमुख को हटाकर एक नए सक्षम अधिकारी को एनटीए का दायित्व तो दिया ही, सीबीआइ जांच भी बैठा दी है। कई लोगों को गिरफ्तार भी किया गया है। सरकार की गंभीरता का अंदाजा इससे भी लगाया जा सकता है कि स्वयं राष्ट्रपति के संसदीय अभिभाषण में नीट मुद्दे का उल्लेख हुआ। वहीं, शिक्षा मंत्री धर्मेंद्र प्रधान ने परीक्षाओं को पारदर्शी और निष्पक्ष बनाने के लिए पूर्व इसरो चेयरमैन के. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में एक समिति गठित की, जो परीक्षा प्रक्रिया में सुधार, डाटा सुरक्षा प्रोटोकाल और एनटीए की संरचना पर अनुशंसा देगी। केंद्र ने पेपर लीक और नकल रोकने के लिए सार्वजनिक परीक्षा (अनुचित साधनों की रोकथाम) अधिनियम, 2024 जैसे सख्त कानून को भी अधिसूचित कर दिया है। इस कानून के तहत सभी अपराध संज्ञेय और गैर-जमानती हैं। इस मामले में सीबीआइ को यह जांच भी करनी चाहिए कि क्या इस मामले में कोई अंतरराष्ट्रीय कड़ी भी जुड़ी है? ध्यातव्य है कि नीट परीक्षा 12 अन्य देशों में भी आयोजित की गई थी। पेपर लीक में डार्कनेट की भूमिका भी देखी जा रही है। रही बात नीट को रद करने की तो अब यह मामला सुप्रीम कोर्ट में विचाराधीन है। उसका निर्णय जो भी हो, लेकिन ममता बनर्जी और एमके स्टालिन द्वारा नीट परीक्षा की व्यवस्था को ही समाप्त कर देने की मांग कहीं से भी उचित नहीं। तमिलनाडु के अन्य नेता भी नीट का पुरजोर विरोध कर रहे हैं।

उपयोगी है नीट जैसी केंद्रीकृत परीक्षा। एएनआइ

ममता बनर्जी ने लिखा है कि गड़बड़ियों के मद्देनजर नीट परीक्षा को समाप्त कर पुरानी व्यवस्था लागू की जाए, जिसमें राज्य सरकारें अपने-अपने राज्यों के मेडिकल कालेजों में एडमिशन के लिए अलग-अलग प्रवेश परीक्षाएं आयोजित करती थीं। उनके अनुसार इसमें ज्यादा परेशानी भी नहीं थी, लेकिन ममता का यह तर्क दमदार नहीं। पुरानी व्यवस्था में छात्रों की परेशानी का तो कोई ठिकाना नहीं था। एक ही मेडिकल पाठ्यक्रम (एमबीबीएस) में प्रवेश के लिए दर्जनों अलग-अलग परीक्षाएं होती थीं। एम्स, बीएचयू, एएमयू, पुडुचेरी, सीबीएसई, एएफएमसी के अतिरिक्त सभी राज्यों की अपनी मेडिकल प्रवेश परीक्षाएं होती थीं। फिर विभिन्न प्राइवेट कालेजों की अपनी अलग-अलग प्रवेश परीक्षाएं भी होती थीं। निम्न वर्ग और निम्न मध्यम वर्ग के विद्यार्थियों के लिए सभी परीक्षाओं में बैठना असंभव था। उच्च मध्यम वर्ग का छात्र भी इतनी ज्यादा परीक्षाओं को देते-देते पस्त हो जाता था। समय, धन, ऊर्जा की बर्बादी अलग होती थी। इन्हीं जटिलताओं के कारण 2017 से एकीकृत मेडिकल प्रवेश परीक्षा नीट शुरू हुई। नीट की विसंगतियों की पहचान कर उन्हें दूर करने की आवश्यकता है, न कि इस नई व्यवस्था को खत्म करने की।

ममता बनर्जी के अनुसार वर्तमान प्रणाली ने भ्रष्टाचार को जन्म दिया है। यहां जानना जरूरी है कि केंद्र या राज्य सरकार, चाहे किसी भी पार्टी की हो, प्रवेश परीक्षाओं या रोजगार परीक्षाओं में पेपर लीक और गड़बड़ी का इतिहास बहुत पुराना है। उनका यह कथन भी तर्कसम्मत नहीं कि एकात्मक-केंद्रीकृत परीक्षा प्रणाली देश के संघीय ढांचे की भावना का उल्लंघन करती है। शिक्षा संविधान की समवर्ती सूची में है। अतः जनहित में केंद्र ऐसे निर्णय ले सकता है। राज्यों में आइएएस और आइपीएस की नियुक्ति के लिए केंद्रीय स्तर पर यूपीएससी द्वारा एक केंद्रीकृत परीक्षा दशकों से आयोजित की जा रही है। अगर ममता की बात मान ली जाए तो फिर इंजीनियरिंग, कानून या अन्य प्रवेश परीक्षाओं में भी ऐसी मांगें उठेंगी, जो नई समस्याओं को जन्म देगा। यहां समझना जरूरी है कि अलग-अलग परीक्षाओं वाली व्यवस्था का ज्यादा लाभ अमीर छात्रों को ही मिलेगा। नीट का विरोध और उसे समाप्त करने की मांग कहीं से जायज नहीं। नीट और इस जैसी अखिल भारतीय केंद्रीकृत परीक्षाएं देश हित में हैं। यह जरूर है कि इनकी शुचिता के लिए सभी आवश्यक कदम उठाए जाएं, ताकि ईमानदार-प्रतिभावान अभ्यर्थियों के साथ भविष्य में छलावा न हो।

(लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय में सीनियर प्रोफेसर और डीन आफ प्लानिंग हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

सत्य की महत्ता

जीवन में सत्य की भूख तो सभी को होती है, लेकिन जब कभी भी सत्य परोसा जाता है तो बहुत कम लोगों को इसका स्वाद पसंद आता है। सत्य के संबंध में जानना और सत्य का मर्म समझ लेना दोनों में बड़ा अंतर है। तैरने के संबंध में पढ़ा गया महाशास्त्र भी तैरने की कला में पारंगत नहीं बना सकता। तैरना सीखने के लिए तो जलराशि में ही उतरना पड़ेगा। इसी प्रकार हम सत्य-असत्य, पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म और आत्मा-परमात्मा आदि के विषय में अत्यधिक जानकारियां संग्रहित किए हुए हैं। हालांकि, ये जानकारियां सिर्फ सुनने का साधन और बोलने की परंपरा बनकर रह गई हैं और हमारे आचरण में नहीं उतर पाईं। जैसे कागज की नाव से समुद्र पार नहीं किया जा सकता वैसे ही इन सभी बातों को मात्र पढ़-सुन कर ही हम अभीष्ट की प्राप्ति नहीं कर सकते। ज्ञान और विचार के साथ उसे आचरण में उतारने की मनोवृत्ति भी आवश्यक होती है।

सत्य अकाट्य है। द्वेष उस पर हमला कर सकता है। अज्ञानता उसका उपहास उड़ा सकती है, किंतु अंत में सत्य का अस्तित्व ही रहता है। हमारे जीवन में समय अत्यंत मूल्यवान होता है, क्योंकि जो क्षण एक बार निकल गया वह दोबारा जीवन में लौटकर नहीं आता, लेकिन सत्य का मूल्य उससे भी अधिक होता है। केवल इसीलिए नहीं कि इसके लिए अत्यधिक मूल्य चुकाना पड़ता है, बल्कि इसलिए भी यह कहीं अधिक मूल्यवान होता है। सत्य स्वयं में एक ऐसा मूल्य है जिस पर विश्वास, ईमानदारी, संवेदनशीलता, दया और अपनत्व जैसे अन्य मूल्य भी टिके हुए हैं। इन्हीं मूल्यों पर टिकी है मानवता।

सत्य मानवीय अस्तित्व का आधार है। सत्य पूरी मानव जाति को मानवतावादी बनाता है। सत्य के लिए सब कुछ त्यागा जा सकता है, लेकिन किसी के लिए भी सत्य का त्याग नहीं किया जा सकता। कितना ही भयंकर तूफान हो, उनसे सत्य की नाव डगमगा सकती है, लेकिन अपने सवार को डुबोएगी नहीं, किसी न किसी प्रकार किनारे पहुंचा ही देगी।

डा. निर्मल जैन

गतिहीन जीवनशैली का सेहत पर असर

देवेंद्रराज सुथार

देश में लगभग 50 प्रतिशत लोग पर्याप्त शारीरिक श्रम नहीं करते हैं, जिस कारण वे अस्वस्थ हो रहे हैं

सेहतमंद आबादी किसी भी राष्ट्र की प्रगति की रीढ़ होती है। जब नागरिक स्वस्थ होते हैं, तो वे अर्थव्यवस्था में अधिक प्रभावी ढंग से योगदान देते हैं, सामाजिक स्थिरता को बढ़ावा देते हैं और जीवन की समग्र गुणवत्ता को बढ़ाते हैं। लेकिन आर्थिक विकास और तकनीकी प्रगति के बावजूद भारत सार्वजनिक स्वास्थ्य के मामले में एक बड़ी चुनौती का सामना कर रहा है। 'द लैंसेट ग्लोबल हेल्थ' की एक हालिया रिपोर्ट के अनुसार, 2022 में भारत में लगभग 50 प्रतिशत लोग पर्याप्त शारीरिक श्रम नहीं करते हैं, जो उन्हें अस्वस्थ बना रहा है। भारतीय कुल मिलाकर एक घंटे भी नियमित रूप से कसरत नहीं करते हैं।

वर्ल्ड हेल्थ आर्गेनाइजेशन ने हर सप्ताह 150 मिनट मीडियम एक्सरसाइज या फिर हर हफ्ते 75 मिनट फास्ट स्पीड एक्सरसाइज करने की सलाह दी है। रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत की आधी से ज्यादा आबादी इस गाइडलाइन को पूरा नहीं कर रही है। अगर यही हाल रहा, तो 2030 तक भारत की करीब 60 प्रतिशत आबादी शारीरिक रूप से अस्वस्थ हो जाएगी। विश्व स्वास्थ्य संगठन इस बात पर जोर देता रहा है कि शारीरिक गतिविधि की कमी से मधुमेह और हृदय रोग का जोखिम बढ़ जाता है। ये बीमारियां भारत में पहले से ही प्रचलित हैं और निष्क्रियता की बढ़ती दरें स्थिति को और भी बदतर बना सकती हैं। इन बीमारियों में संभावित वृद्धि से स्वास्थ्य सेवा की लागत बढ़ सकती है और उत्पादकता में कमी आ सकती है, जिससे देश के संसाधनों पर और भी ज्यादा दबाव पड़ सकता है।

गतिहीन जीवनशैली के लिए कई कारक योगदान करते हैं। एक प्रमुख कारक तकनीक पर बढ़ती निर्भरता है। स्मार्टफोन और अन्य डिजिटल उपकरणों द्वारा प्रदान की जाने वाली सुविधा और मनोरंजन ने एक अधिक गतिहीन जीवनशैली को जन्म दिया है। लोग (विशेष रूप से युवा पीढ़ी) अपने फोन पर काफी समय बिताते हैं, जिससे शारीरिक गतिविधियों के लिए उपलब्ध समय कम हो जाता है। बढ़ती अर्थव्यवस्था और सेवा क्षेत्र के उदय के साथ जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा अब ऐसी नौकरियों में लगा हुआ है, जिनमें लंबे समय तक बैठे रहना पड़ता है, जिससे शारीरिक गतिविधियां कम हो जाती हैं।

शहरीकरण और व्यायाम के लिए सार्वजनिक स्थानों में कमी भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। कई शहरों में पैदल चलने या कोई खेल खेलने जैसी शारीरिक गतिविधियों के लिए पार्क और खुली जगहों की उपलब्धता सीमित है। शारीरिक गतिविधि को प्राथमिकता देकर और सक्रिय जीवन का समर्थन करने वाले वातावरण का निर्माण करके भारत अपनी आबादी के स्वास्थ्य और कल्याण में सुधार कर सकता है और राष्ट्र के लिए एक स्वस्थ भविष्य सुनिश्चित कर सकता है।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

निराश करती संसदीय कार्यवाही

'संसद के न चलने का खतरा' शीर्षक से लिखे आलेख में राहुल वर्मा ने देश में मौजूद तमाम समस्याओं के बीच बढ़ते संसदीय गतिरोध को भी देश के लिए बड़ा खतरा बताया है। लेखक का मत है कि स्वस्थ चर्चा एवं बहस को दरकिनार कर संसद का चुनावी मंच के तौर पर इस्तेमाल संवैधानिक मूल्यों की अवहेलना है। संसद में संविधान की प्रतियां दिखाई जा रही हैं, लेकिन क्या उन सिद्धांतों का व्यावहारिक तौर पर पालन किया जा रहा है, जो उसमें उल्लिखित हैं। हंगामा करना और आसन के निकट आकर शोरशराबा करना क्या सांसदों को शोभा देता है? क्या उनकी इस प्रवृत्ति से देश की जनता का भला होगा? कल ऐसे दृश्य देश की विधानसभाओं में देखने को मिलेंगे। फिर स्थानीय स्वशासन की विभिन्न इकाइयों में दिखेंगे तब लोग पंचायत की सबसे बड़ी इकाई का उदाहरण देंगे। तब माननीयों के लिए यह स्थिति असहज होगी। चुनाव खत्म हो गया, मगर हमेशा चुनावी मोड में रहने की अवस्था को और ऐसे आचरण से आखिर उनके प्रति लोगों की क्या धारणा बनेगी? इस दिशा में सरकार को भी सार्थक संवाद की कुछ पहल करनी चाहिए, क्योंकि सदन को सुचारु रूप से चलाना सत्ता पक्ष एवं विपक्ष की साझा जिम्मेदारी है।

mukeshkr.m7542@gmail.com;

परीक्षा पर आनलाइन चर्चा

दैनिक जागरण में प्रकाशित समाचार परीक्षा पर आनलाइन चर्चा में प्रधानमंत्री मोदी नीट-यूजी व यूजीसी-नेट की प्रवेश परीक्षाओं में हुई धांधली एवं अन्य परीक्षाओं के रद होने के विषय पर छात्रों से संवाद करें और भविष्य के प्रति उनकी चिंता एवं प्रवेश परीक्षाओं के स्वरूप को बदलने के लिए अपनी दृष्टि से अवगत कराएं। नीट और यूजीसी-नेट की परीक्षाओं में धांधली और इसके बाद लगातार चल रही जांच के बीच छात्रों का एक बड़ा वर्ग व्यथित है। कोचिंग संस्थानों की संदिग्ध भूमिका ने उन गरीब छात्रों को और भी परेशान किया है जो कोचिंग का महंगा खर्च उठाने की स्थिति में ही नहीं हैं। आदरणीय प्रधानमंत्री जी कोचिंग संस्थानों के संबंध में भी छात्रों के साथ अपने विचार साझा करेंगे तो समाधान भी निकलने की संभावना है। कोचिंग संस्थानों की समस्या केवल उच्च शिक्षा जैसे इंजीनियरिंग, मेडिकल, रिसर्च, फैलोशिप, प्रबंधन की प्रवेश परीक्षाओं तक ही सीमित नहीं है, बल्कि छोटी कक्षाओं और बोर्ड की परीक्षाओं के लिए भी है। यह तो सरकार को भी पता है कि निजी क्षेत्र में शिक्षा बहुत महंगी है और सरकारी स्कूलों की स्थिति सुधारने की राज्य सरकारों को सुध नहीं है तो गरीब बच्चों के भविष्य का क्या होगा? क्या स्कूल और कालेज अपने स्तर पर मेधावी और जरूरतमंद छात्रों को निश्शुल्क कोचिंग की व्यवस्था नहीं कर सकते। क्या स्कूल और कालेज अपने पुस्तकालय नहीं स्थापित कर सकते, जहां प्रतियोगिता परीक्षाओं के लिए पुस्तकें और गाइड सुलभ हो सकें। ये सभी विषय प्रधानमंत्री की परीक्षा पर चर्चा के लिए सार्थक एवं महत्वपूर्ण होंगे।

विनोद जौहरी, दिल्ली

मेलबाक्स

झूठ का पर्दाफाश

हाल ही में हम सबने देखा कि कांग्रेस पार्टी, खासकर राहुल गांधी ने कैसे झूठ का सहारा लेकर कहा कि भाजपा सरकार आई तो संविधान खत्म कर देगी और आरक्षण भी समाप्त कर देगी। इस तरह की अफवाह फैलाकर देश की जनता को बरगलाया और अपेक्षा से अधिक सीटें पाने में सफलता हासिल की। इसके बाद राहुल गांधी ने नेता प्रतिपक्ष बनने के बाद भी यह रवैया नहीं बदला और एक के बाद एक झूठ बोल रहे हैं। इस तरह छल-कपट की प्रणाली उनके और देश दोनों के लिए घातक सिद्ध हो सकती है। इस संबंध में न केवल लोकसभा अध्यक्ष, बल्कि सरकार को भी कार्रवाई करनी चाहिए और राहुल गांधी को गैर जिम्मेदारी वाले अपने रवैये को तुरंत बंद करना चाहिए। सर्वविदित है कि कांग्रेस दस वर्ष से सत्ता से बाहर है और पार्टी के नेताओं को इस बार भी विपक्ष में बैठना पड़ा है तो प्रधानमंत्री को नीचा दिखाने के लिए कांग्रेस के नेता किसी भी हद तक जा सकते हैं।

बाल गोविंद, सेक्टर 44, नोएडा

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें:
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व. नरेन्द्र मोहन ... दूरभाष: नई दिल्ली कार्यालय: 011-43166300, नोएडा कार्यालय: 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 ...

दबे पांव आया खतरा

सेहत के मामले में अच्छी खबरें बहुत कम सुनाई देती हैं। इस बार भी जो खबर आई है, वह बहुत अच्छी नहीं है। हालांकि, इसके पीछे की जो पहल है, उसकी तारीफ तो की ही जानी चाहिए। पहली बार देश में कोलेस्ट्रॉल को लेकर दिशा-निर्देश जारी हुए हैं। अभी तक जब देश के डॉक्टर मरीजों के कोलेस्ट्रॉल या सरल भाषा में कहें, तो शरीर में जमा हो गई चर्बी का इलाज करते थे या लोगों को 'लिपिड प्रोफाइल टेस्ट' कराने की हिदायत देते थे, तो वे यह काम 'यूरोपियन सोसायटी ऑफ कार्डियोलॉजी' के दिशा-निर्देशों के तहत कर रहे होते थे। यह अक्सर कहा जाता रहा है कि भारत की परिस्थितियां दूसरी हैं और लोगों का रहन-सहन बिल्कुल अलग तरह का है, इसलिए यूरोपीय मानक पूरी तरह भारत के लोगों पर लागू नहीं किए जा सकते। 'कार्डियोलॉजिकल सोसायटी ऑफ इंडिया' की 22 सदस्यीय समिति ने अब अधिक कोलेस्ट्रॉल की वजह से होने वाले डिस्लिपिडेमिया को लेकर जो दिशा-निर्देश जारी किए हैं, वे इसी मायने में महत्वपूर्ण हैं। शरीर का यह ऐसा विकार है, जिसका पता अक्सर खुद उसके शिकार को भी नहीं चल पाता, क्योंकि अक्सर इसके कोई स्पष्ट लक्षण नहीं दिखाई देते। नतीजा यह होता है कि वह धीरे-धीरे हृदय रोग और गंभीर स्थितियों में हृदयाघात जैसी समस्याओं की ओर बढ़ता जाता है।

बहरहाल, इस संगठन ने भारत के बारे में जो आंकड़े दिए हैं, वे डराने वाले हैं। देश की 81 फीसदी आबादी में कोलेस्ट्रॉल का स्तर सुरक्षित सीमा से काफी ज्यादा मिला है, यानी चुपचाप होने वाले इस शारीरिक विकार का खतरा देश की आबादी के एक बहुत बड़े हिस्से पर मंडरा रहा है। इसके साथ ही यह भी ध्यान रखना होगा कि अभी भी हमारे देश में आबादी के एक बहुत बड़े हिस्से तक प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएं नहीं पहुंच पाती हैं। बहुत सारी छोटी-छोटी मौसमी बीमारियों तक का इलाज, खासकर दूरदराज के अनेक ग्रामीण इलाकों में आज भी सहज उपलब्ध नहीं है, और जहां प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएं पहुंच गई हैं, वहां भी शायद ही इस तरह की समस्या के इलाज की समुचित व्यवस्था होगी। इसलिए हमारे सामने जो चुनौती है, वह बहुत ज्यादा बड़ी है।

देश की 81 फीसदी आबादी में कोलेस्ट्रॉल का स्तर सुरक्षित सीमा से काफी ज्यादा मिला है, यानी चुपचाप होने वाले इस विकार का खतरा काफी लोगों पर मंडरा रहा है।

दुनिया भर में डिस्लिपिडेमिया को जीवन शैली से जुड़ी समस्या माना जाता है। कहा जाता है कि इस समस्या के मूल में आर्थिक समृद्धि के कारण लोगों की खान-पान की शैली बदलना है। फास्ट-फूड के आधुनिक दौर में अब हमारे भोजन में ज्यादा शर्करा, ज्यादा कार्बोहाइड्रेट और ज्यादा वसा होने के कारण यह समस्या तेजी से बढ़ रही है। लेकिन यह तर्क शायद भारतीय समाज पर पूरी तरह से लागू नहीं होता। जिस देश में आज भी आबादी का काफी बड़ा हिस्सा मुफ्त अनाज पर निर्भर हो, वहां बहुसंख्यक लोगों को होने वाली शारीरिक समस्या के लिए सिर्फ उस जीवन शैली को दोषी नहीं ठहराया जा सकता, जिसका सेहरा हम अक्सर समृद्ध लोगों के सिर पर बांधते रहे हैं। यही वजह है कि भारतीय स्थितियों में इस समस्या के प्रसार के अभी और गहन अध्ययन की जरूरत है। इसी के साथ-साथ यह भी बहुत जरूरी है कि इस समस्या से बचाव के तरीकों का देश में पर्याप्त प्रचार-प्रसार हो। यह बहुत कठिन काम नहीं है। उदाहरण भी हमारे पास है। सही तरीके से प्रचार के कारण ही कोविड के दौर में बहुत बड़ी आबादी ने मास्क पहनने शुरू कर दिए थे। इसके इलाज को सर्वसुलभ बनाने के रास्ते भी हमें खोजने होंगे।

यूरोपीय हवा के उलट ब्रिटेन का परिणाम

यहां क्लिक करें

हर्ष वी पंत | प्रोफेसर, किंग्स कॉलेज लंदन

ऋषि सुनक को कम वक्त मिला, उनके पूर्ववर्ती कंजर्वेटिव प्रधानमंत्रियों की नीतियों से खफा लोगों ने लेबर पार्टी पर भरोसा जताते हुए उसे ऐतिहासिक जनादेश दिया है।

ब्रिटेन में समय-पूर्व चुनाव कराने का प्रधानमंत्री ऋषि सुनक का दांव इस कदर उल्टा पड़ जाएगा, इसका अंदेशा संभवतः उनको भी नहीं होगा। वह मानकर चल रहे थे कि चुनावी समर में वह न सिर्फ कंजर्वेटिव पार्टी को डूबने से उबार पाएंगे, बल्कि जनता में अपनी छवि भी सुधार सकेंगे। मगर शुक्रवार को आए चुनाव नतीजों में उन्हें बुरी तरह मुंह की खानी पड़ी है। बीते 14 वर्षों से कंजर्वेटिव सत्ता में थी, लेकिन इस बार कीर स्टार्मर के नेतृत्व में लेबर पार्टी ने उसे ऐतिहासिक मात दी है। इतना ही नहीं, निगेल फराज की पार्टी 'रिफॉर्म यूके' का उम्मीद से बेहतर प्रदर्शन या स्कॉटलैंड में 'स्कॉटिश नेशनल पार्टी' की हार भी ब्रिटिश राजनीति में आए आमूल-चूल बदलाव के संकेत दे रही है।

प्रधानमंत्री सुनक ने हार की नैतिक जिम्मेदारी लेते हुए अपने पद से इस्तीफा दे दिया है। मगर देखा जाए, तो वह कंजर्वेटिव पार्टी का बोझ ही ढो रहे थे। बेशक पार्टी को मात मिली है, लेकिन सुनक को इसके लिए जिम्मेदार ठहराना जल्दबाजी होगी। इस हार के कई कारण हैं। सबसे पहला, सत्ता-विरोधी रुझान। ब्रिटेन में दरअसल सत्ता-परिवर्तन का एक लंबा चक्र चलता रहा है। मसलन, 1979 से 1997 तक वहां कंजर्वेटिव का शासन रहा, फिर लेबर पार्टी सत्ता में आई। वह 2010 तक सरकार चलाती रही, जिसके बाद कंजर्वेटिव को फिर से ताज मिला। यही कारण था कि चुनाव से पहले ही लेबर पार्टी के सत्ता में लौटने का अनुमान लगाया जा रहा था। हां, इतनी भारी जीत का आकलन शायद ही था।

दूसरी वजह है, कंजर्वेटिव पार्टी की आंतरिक समस्या। इसे 'पार्टी ऑफ गवर्नेंस' कहा जाता है, यानी यह शासन करने के लिए बनी है, पर इसमें अनुशासन का अभाव स्पष्ट दिखा। पार्टी की असल कमान किसके हाथों में है, यह शायद ही किसी को पता था। साल 2019 के बाद से सरकार चलाने वाले बोरिस जॉनसन और लिज ट्रस जैसे प्रधानमंत्री तमाम तरह के आरोपों में घिरे, जिसके बाद ऋषि सुनक को बतौर क्षतिपूर्ति लाया गया। उन्होंने कोशिशें जरूर कीं, लेकिन उनके पास इतना समय नहीं था कि वह पार्टी की पुरानी गलतियों को सुधार सकें। नतीजतन, पार्टी न ढंग से शासन कर सकी और न चुनाव जीतने के लिए जरूरी योजनाओं पर अमल कर सकी।

तीसरी वजह है, नीतिगत चूक। जनवरी, 2020 में यूरोपीय संघ से बाहर निकलने और कोविड के बाद सुस्त पड़ी अर्थव्यवस्था को संभालने में पार्टी बुरी तरह नाकाम रही। लोगों में यह नाराजगी थी कि महंगाई बढ़ती जा रही है, उनका रहन-सहन खर्चीला होता जा रहा है, स्वास्थ्य योजनाएं ठीक से काम नहीं कर रहीं हैं, और सरकार जन-समस्याओं को दूर करने के बजाय अंदरूनी मुश्किलों में उलझी हुई है। हालांकि, सुनक के आने के बाद वहां की आर्थिकी कुछ हद तक पटरी पर लौटती दिखी, लेकिन प्रधानमंत्री के प्रयास लोगों का भरोसा जीतने में नाकाफी साबित हुए।

एक तरफ सुस्त अर्थव्यवस्था लोगों की पेशानी पर बल ला रही थी, तो दूसरी तरफ अन्य देशों से आ रहे प्रवासी एक बड़ी समस्या बनते दिख रहे थे। सुनक ने भी माना कि ब्रिटेन में आव्रजन दर अधिक है, जिसे कम करने के लिए जरूरी कदम उठाए जाने चाहिए। मगर लगता है, उनकी बातें जनता पर असर नहीं डाल सकीं। लिहाजा, उनकी आर्थिक नीतियों से खफा लोगों ने लेबर पार्टी पर भरोसा जताया, तो आप्रवासन के मसले पर आक्रामक निजेल फराज की पार्टी 'रिफॉर्म यूके' ने कंजर्वेटिव के वोट हड़पे।

रही बात लेबर की, तो इसके लिए भले कहा जाता हो कि इसमें अनुशासन का अभाव रहता है, लेकिन स्टार्मर के नेतृत्व में इस दल ने खुद को साबित किया है। स्टार्मर ने सबसे पहले वाम नीतियों को और बढ़ चली अपनी पार्टी को मध्यमार्ग पर लौटाया और फिर यहूदी समाज के साथ भेदभाव करने संबंधी आम धारणा मिटाई। पार्टी ने अपने लोगों पर भी कार्रवाई की, जिससे जनता में इसकी छवि सुधरी। चुनाव-अभियान के दौरान इसने कंजर्वेटिव की नीतियों पर हमला बोला, लोगों की जीवनशैली को बेहतर बनाने का आश्वासन दिया और सुशासन व निवेश की जोरदार वकालत की। संगठनात्मक बदलाव का भी नतीजा रहा कि पार्टी को इतनी भारी जीत मिली है।

दिलचस्प यह भी है कि ऐसे वक्त में, जब यूरोप में दक्षिणपंथी राजनीति अपना आधार बढ़ा रही है, ब्रिटेन ने वामपंथ की ओर झुकाव रखने वाली मध्यमार्गी पार्टी पर भरोसा जताया है। यह ब्रेग्जिट के दिनों की पुनरावृत्ति जैसी है, क्योंकि जब ब्रिटेन यूरोपीय संघ से बाहर निकलने को तत्पर था, तब सभी यूरोपीय देश संघ की एकजुटता की वकालत किया करते थे। हालांकि, ब्रिटेन में रिफॉर्म यूके की जीत का मतलब यही है कि दक्षिणपंथ का आधार अब भी व्यापक है और शायद कंजर्वेटिव का उस पर अब उतना दावा नहीं रहा। ऐसे में, नजर इस बात पर बनी रहेगी कि कंजर्वेटिव नेता इस हार से क्या सबक लेते हैं?

बहरहाल, लेबर पार्टी के सत्तासीन होने के बाद भी ब्रिटेन की विदेश नीति में शायद ही बहुत बड़ा बदलाव होगा। ऐसा इसलिए, क्योंकि कंजर्वेटिव की विदेश नीतियों को कमोबेश उसने मंजूरी दी थी। चाहे ब्रेग्जिट के बाद 'ग्लोबल ब्रिटेन', यानी बाकी दुनिया से रब्ता रखने संबंधी नीतियों का मसला हो या हिंद प्रशांत में ब्रिटेन की भूमिका का या फिर अमेरिका से रिश्ते- इन सबमें निरंतरता बनी रहने की संभावना ही अधिक है।

इसी कारण, भारत से जुड़ी ब्रिटिश नीतियों में शायद ही कोई फेरबदल हो सकेगा। दोनों देशों के बीच मुक्त व्यापार समझौता एक बड़ा मसला है, जिसमें कंजर्वेटिव पार्टी विशेष रुचि ले रही थी, पर किसी कारणवश हो नहीं सका है। चूंकि बतौर विपक्ष लेबर पार्टी ने भी इसकी हामी भरी थी, इसलिए उम्मीद है, यह समझौता जल्द साकार हो सकता है। पार्टी ने कहा भी है कि वह यह सुनिश्चित करेगी कि ब्रेग्जिट बेहतर तरीके से काम करे, यूरोपीय संघ के साथ संबंध मजबूत हों और अन्य देशों के साथ रिश्तों को गति मिले।

जाहिर है, भारत के साथ सामरिक संबंध को और मजबूत किया जा सकता है। स्टार्मर ने कहा है कि दोनों देशों के रिश्तों पर इतिहास की छाया रही है। इसे दूर करते हुए 'नए भारत' के साथ आगे बढ़ने पर जोर दिया जाएगा। यहां एक दिलचस्प बात यह भी है कि पहले भारत को लेकर लेबर और कंजर्वेटिव में मतभेद रहा करते थे, लेकिन स्टार्मर ने इस अंतर को पाट दिया है, जो भारत के लिए एक शुभ संकेत है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

अस्ताना में जयशंकर का बीजिंग को स्पष्ट संदेश

यहां क्लिक करें

शशांक | पूर्व विदेश सचिव

कजाखस्तान की राजधानी अस्ताना में शंघाई सहयोग संगठन (एससीओ) की बैठक में विदेश मंत्री एस जयशंकर का शामिल होना कई अर्थों में महत्वपूर्ण रहा। भारत के लिए सदस्य देशों तक यह संदेश पहुंचाना जरूरी था कि वे हमारी चिंताओं को भी ध्यान में रखें। इसके अलावा, चीन व रूस के साथ काफी समय से हमारा शीर्ष स्तर पर संवाद नहीं हो सका है। इसकी एक वजह तो रूस व भारत में चुनावी गहमागहमी थी। लेकिन चूंकि रूस में चुनाव हो चुके हैं और बीजिंग में भी हमें भी जिनपिंग से ही चीजें तय करनी हैं, तो इन दोनों देशों के साथ भविष्य के रिश्तों को कैसे आकार दिया जाए, इस विषय पर आगे बढ़ने के लिए इस मंच का उपयोग जरूरी था।

शंघाई सहयोग संगठन की स्थापना इस शताब्दी की शुरुआत में की गई थी और इसके संस्थापक देश रूस, चीन, कजाखस्तान, किर्गिकिस्तान, ताजिकिस्तान और उज्बेकिस्तान थे। एससीओ का शुरुआती मकसद तो इन सदस्य देशों के बीच सीमा-विवाद को सुलझाना था, मगर बाद में इसे क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग और सुरक्षा के इरादे से विस्तार दिया गया। भारत और पाकिस्तान साल 2017 में इस संगठन के सदस्य बने। आज इसके सदस्य देशों में दुनिया की करीब 40 फीसदी आबादी बसती है और विश्व के तेल भंडार का लगभग 20 प्रतिशत भाग इन देशों के पास है। इन तथ्यों के आलोक में इस संगठन की अहमियत समझी जा सकती है।

भारतीय विदेश मंत्री ने वांग यी को स्पष्ट कर दिया है कि हमारे रिश्ते तब तक सामान्य नहीं चल सकते, जब तक सीमा पर तनाव है।

मगर इस संगठन के विस्तार के बुनियादी विषयों में सबसे महत्वपूर्ण विषय आतंकवाद का था। इसके आगे इस समस्या से निपटने के लिए वह रास्ता निकालने की चुनौती है कि जो देश आतंकवाद को किसी भी तरह से पालते-पोसते रहे हैं, उन पर कैसे अंकुश लगाया जाए और उनके ऊपर किस तरह के दबाव बनाए जाएं। खासकर मध्य और दक्षिण एशिया के पड़ोसी सदस्य देशों के शीर्ष नेतृत्व तक यह बात पहुंचानी जरूरी थी कि ऐसा नहीं हो सकता कि जिन देशों पर आतंकवाद को प्रश्रय देने के ठोस आरोप हैं, उनके साथ कारोबारी रिश्ते बढ़ाए जाते रहें या उनको आर्थिक सहलियतें मिलती रहें। विदेश मंत्री ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का इस बारे में स्पष्ट दृष्टिकोण एससीओ नेताओं के आगे रखा।

दूसरी बात यह भी है कि विश्व स्तर पर रूस-यूक्रेन युद्ध जारी है और खाड़ी क्षेत्र के टकराव में भी नए-नए खिलाड़ी उभर रहे हैं, जिससे स्वेज कैनाल का इलाका बेहद संवेदनशील हो गया है। उस समुद्री मार्ग से व्यापार पर कई तरह के जोखिम मंडरा रहे हैं। ऐसे में, भारत को नए विकल्पों के बारे में भी सोचना है, ताकि हमारा निर्यात-आयात अबाध रूप से जारी रह सके। इन विकल्पों पर सहमति बनाने और जमीनी स्तर पर ढांचागत निर्माण में किसी किस्म की रुकावट को दूर करने के लिए विदेश मंत्री की एससीओ नेताओं से बातचीत हुई है। प्रधानमंत्री कुछ ही दिनों में रूस जाने वाले हैं, तो उसके साथ आपसी व्यापार और संबंधों को आगे बढ़ाने के लिहाज से भी एस जयशंकर ने पृष्ठभूमि बनाने का प्रयास किया है।

एक अहम घटनाक्रम अस्ताना में चीनी विदेश मंत्री वांग यी से जयशंकर की द्विपक्षीय मुलाकात है। भारतीय विदेश मंत्री ने बिना किसी लाग-लपेट के वांग यी को यह स्पष्ट कर दिया है कि हमारे रिश्ते तब तक सामान्य नहीं आगे चल सकते, जब तक सीमा पर तनाव है या अनिश्चितता बनी रहेगी। चीन यदि गतिरोध को दूर करने के लिए जल्दी-जल्दी बैठकें करने पर रजामंद हुआ है, तो इसकी वजहें हैं। हाल के वर्षों में भारत ने चीन के साथ द्विपक्षीय संबंधों और कारोबारी रिश्तों के प्रति उदासीन रवैया अपनाया है। कई चीनी कंपनियों पर भारतीय कानूनों के उल्लंघन के विरुद्ध सख्त कदम उठाए गए हैं। वहीं, चीन छोड़ने वाली कई विदेशी कंपनियों ने निवेश के लिए भारत को नया ठिकाना बनाया है। ये सारी बातें बीजिंग को जरूर खल रही होंगी।

बहरहाल, अंतरराष्ट्रीय राजनय में संबंधों का विकास रवैयों के विश्लेषण से ही होता है। विदेश मंत्री ने वांग यी को यही संदेश देने की कोशिश की है कि हमारे संबंध बिल्कुल टूट के मुहाने पर भले न हों, मगर बीजिंग को भी हमारी प्राथमिकताओं और चिंताओं को समझना होगा। कजाखस्तान में दोनों देशों के संबंधों की एक तरह से समीक्षा हुई है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

बांटने में ही मोक्ष

हमारे यहां मोक्ष की बहुत बात की जाती है, जबकि आज शिक्षा यह हो रही है कि कैसे छिपाकर अपने बेटे को बहुत-बहुत दे दें। मोक्ष की जो अवस्था है, उसमें कहा जाता है कि *भोगे साम्यम्।* भगवान सब कुछ अपने बराबर कर देते हैं। कौन मालिक होगा, जो अपने जैसा नौकरों को खिलाएगा? कौन मालिक होगा, जो अपने जैसा सबको पहनाएगा?

हमारे एक भक्त हैं। बहुत अच्छा जीवन है उनका हीरे की दुनिया में। लगभग 6,000 कर्मचारी उनकी फैक्टरी में काम करते हैं। मेरे संपर्क में पूरे विश्व में उनके जैसा कोई नहीं है। उनका नियम है कि वह अपने व्यापार में कोई गलत काम नहीं करते हैं। पांच से छह लाख रुपये सफेद धन रोज दान करते हैं। उनकी विशेषता यह है कि उनके यहां 6,000 लोगों का भोजन साथ बनता है। वह और उनके सभी पार्टनर भी भोजन साथ करते हैं। एक ही भोजन सभी करते हैं और अलग से किसी को विशेष कुछ नहीं मिलता। एक ही मिर्च भी किसी को अलग से नहीं मिलती। ऐसे-ऐसे लोग काम करते हैं उनके यहां, जिनकी लाखों रुपये मासिक तनख्वाह है। खूब प्रतिष्ठा है, किंतु सभी एक समान भोजन करते हैं।

अभी तो कई लोग इसीलिए कमा रहे हैं कि अलग सा खाएं, दूसरों से कुछ अलग, कुछ अच्छा पहनें; दूसरों से अलग घूमें, दूसरों से कुछ अलग आनंद करें, दूसरों से अलग जीवन जिएं। ऐसे लोग सोचते हैं कि हम कैसे वह वस्त्र पहनेंगे, जो गरीब पहनते हैं? लोग इसी प्रयास में दिन-रात लगे हुए हैं कि हमारा सब कुछ अलग हो, खाना-पीना-रहना, आभूषण अलग हो, तभी तो हमारे कमाने की सार्थकता है, जबकि वास्तव में मनुष्य जीवन की सार्थकता तभी होगी, जब हम बांटकर खाएंगे। यह जीवन की, सनातन धर्म की परंपरा है, जो वेदों से प्रेरित होती है।

ईश्वर भी ऐसा ही करता है- वह सबमें शक्ति का वितरण करता है। वायु देव करते हैं, वरुण देव करते हैं। पृथ्वी कभी नहीं बोलती किसी गरीब को, किसी मूर्ख को, किसी कुरूप को कि यहां तो ऋषि बैठते हैं, तो तू यहां क्यों बैठा है? यहां तो कोई धनवान बैठता है, तू

केवल भोजन ही नहीं, जो हमें ज्ञान प्राप्त हुआ है, जो यश प्राप्त हुआ है और संसार के जो भी दूसरे संसाधन और बल प्राप्त हुए हैं, उनको भी बांटना चाहिए। सनातन धर्म में यही प्रक्रिया रही है।

क्यों बैठा है? वायु देव, वरुण देव यदि पक्षपात की दृष्टि से देखने लग जाएं, विषम दृष्टि से शक्ति देने लग जाएं, तो संसार का सत्यानाश हो जाएगा।

केवल भोजन ही नहीं, जो हमें ज्ञान प्राप्त हुआ है, जो यश प्राप्त हुआ है और संसार के जो भी दूसरे संसाधन और बल प्राप्त हुए हैं, उनको भी बांटना चाहिए। सनातन धर्म में प्रक्रिया रही है कि गुरु से पढ़कर आपस में ज्ञान का वितरण करते हैं। गुरु वशिष्ठ से पढ़ने के बाद राम जी वही करते थे। वह अपने साथियों, भाइयों के साथ ज्ञान का वितरण करते थे। आप भी बांटिए!

रामानंदाचार्य स्वामी श्रीरामनरेशाचार्य

हिन्दुस्तान | 75 साल पहले

06 जुलाई, 1949

गम्भीर समस्या

हमारे नेताओं के सामने आज गंभीर समस्या उपस्थित है। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद वे देश को दृढ़ और उन्नत करना चाहते हैं, उसे विश्व की महाशक्ति बनाने की वे आकांक्षा रखते हैं और एशिया जो हमारी ओर नेतृत्व के लिए निहार रहा है, उसे वे निराश नहीं करना चाहते। किन्तु जिस संगठन के आधार पर हमने स्वतंत्रता पाई और जिसके अब तक के कार्यकलाप पर ही हमारी उपर्युक्त आशाएं हैं, शासन की नई जिम्मेदारी की ओर हमारा ध्यान जाने से उसकी और शायद हमारा ध्यान उतना नहीं रहा। फलतः उसमें कमजोरी और विशृंखलता आना स्वाभाविक था। विभिन्न प्रांतों में कांग्रेसजनों के आपसी विवाद और आरोप-प्रत्यारोप क्या अन्दर की इसी सड़ांध की सूचना नहीं देते?

कांग्रेस ने अपनी संगठन-शक्ति और सेवाओं से जो प्रभाव देश में कायम कर रखा था, वह अब नहीं रहा, यह नहीं कह सकते। महात्मा गांधी अब हमारे बीच नहीं रहे, तथापि नेहरू जी और सरदार पटेल जैसे व्यक्तित्व अब भी बहुत असर रखते हैं। किन्तु उनका सारा समय राज-काज में चला जाता है और कांग्रेस मानो अनाथ सी हो रही है। कुछ कांग्रेस से खिसकते जाते हैं, कुछ उसमें रहते हुए भी उसकी भावना का पालन नहीं करते। कांग्रेसजनों की एकता की भावना भी शायद अब ढीली पड़ गई है। इसका सबसे बुरा रूप वह है जब किसी कांग्रेसजन की अन्य कांग्रेसजनों द्वारा खबरी की जाती है। अविश्वास के प्रस्ताव, विविध आरोप और चुनाव में निष्क्रियता अथवा चुपचाप विरोधी पक्ष का साथ देना ऐसी बातें हैं, जिनका औचित्य हमारी समझ में नहीं आता। ये बातें संगठन-निष्ठा के बजाय व्यक्तिगत आकांक्षा और ईर्ष्या-द्वेष तथा उनसे प्रेरित उजाड़-पछाड़ की ही द्योतक हैं। ऐसा करते हुए लोग यह भूल जाते हैं कि अन्ततोगत्वा इससे संगठन की बदनामी होती है और वह कमजोर पड़ता है। जिस डाल पर बैठे हों, उसी को काटने की यह प्रक्रिया है, जो कभी लाभकर नहीं हो सकती। यह बात नहीं कि हमारे नेता इस स्थिति को महसूस न करते हों, किन्तु स्वतंत्रता का जो नया बोझ उन्होंने अपने ऊपर लिया, उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती थी। फिर भी कुछ घटनाएं ऐसी हुई हैं कि इस ओर गंभीरता से नेतृत्व का ध्यान गया मालूम पड़ता है और लगता है कि अब उपेक्षा नहीं की जायेगी। मद्रास और पश्चिम बंगाल की घटनाओं ने इस ओर तत्काल ध्यान देना आवश्यक कर दिया है।

राजनाथ सिंह | कैबिनेट रक्षा मंत्री

भारत ने 2023-24 में रक्षा उत्पादन में अब तक की सबसे बड़ी वृद्धि दर्ज की है। इस अवधि में देश में 1,26,887 करोड़ रुपये का उत्पादन हुआ है, जो पिछले वित्तीय वर्ष के मुकाबले 16.8 प्रतिशत अधिक है।

आजकल फर्जी बाबाओं का बोलबाला

यह देश का दुर्भाग्य है कि आजकल धर्म और आस्था के नाम पर ढोंगी बाबाओं की दुकानें खूब फल-फूल रही हैं। जनता को भ्रमित करके तथाकथित बाबा भौतिक सुविधाओं का भोग करने में पीछे नहीं हैं। हाथरस समागम की भगदड़ से ऐसे कई सवाल पैदा होते हैं, जिनके जवाब हमें तलाशने होंगे। खासकर इस सवाल का कि क्या बाबाओं को समाज में अंधविश्वास को बढ़ावा देने की छूट मिलनी चाहिए? व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति में लगे इन बाबाओं को क्या ऐसे सार्वजनिक प्रवचन करने की छूट मिलनी चाहिए, जिनमें व्यवस्था से अधिक भीड़ जुटाने की स्वतंत्रता हो? इससे दुखद स्थिति और क्या हो सकती है कि जनता गरीबी और अभावों में जीने के उपरांत भी ऐसे बाबाओं के जाल में फंस जाती है, जो स्वयं को भगवान घोषित करके अफवाह फैलाते हैं कि उनके चरणों की धूल को माथे पर लगाने से बीमारियां दूर हो सकती हैं। ताज्जुब तो तब होता है कि जब ऐसे पाखंडी बाबाओं के शिष्यों में प्रशासनिक अधिकारी और राजनेता तक शामिल दिखते हैं।

यहां सवाल केवल एक बाबा का नहीं है। वास्तव में, आज देश में ऐसे बाबाओं की भरमार है। हम ऐसे बाबाओं का ही बोलबाला देख रहे हैं, जिन्होंने किसी न किसी तरह से स्वयं को अनेकानेक उपाधियों से अलंकृत कर रखा है और आडंबर के नाम पर अपने भव्य आश्रम बनाकर विलासितापूर्ण जीवन जी रहे हैं। कौन नहीं जानता कि गुरमीत राम रहीम, नारायण साईं, निर्मल जीत सिंह उर्फ निर्मल बाबा, सुखविंदर कौर उर्फ राधे मां, ओम बाबा उर्फ विवेकानंद झा, स्वामी असीमानंद, मलकान गिरी जैसे तमाम बाबाओं को फर्जी घोषित किया जा चुका है, फिर भी कुकुरमुत्तों की तरह जगह-जगह ऐसे बाबाओं के आश्रम खुल रहे हैं और वे अपने अनुयायियों को भ्रमित करने में जुटे हुए हैं। सबसे महत्वपूर्ण सवाल यह है कि उनकी आय के स्रोत क्या हैं, क्योंकि भोले-भाले लोगों को भ्रमित करने वाले इन ढोंगी बाबाओं के अतीत में कोई झांकने का प्रयास नहीं करता।

यह समझना मुश्किल नहीं है कि सत्संग के नाम पर ये बाबा समाज को कौन सी दिशा प्रदान करते हैं? लिहाजा, समय आ गया है कि इन कथित बाबाओं की पहचान करके उनके द्वारा भी हो रहे एकत्र किए जाने पर प्रतिबंध लगाया जाए। अगर यह संभव न हो, तो प्रशासन के समय पूर्व से घोषित भीड़ से अधिक श्रद्धालु जुटाने पर उन्हें दंडित किया जाए, ताकि निरीह भीड़ को भगदड़ घटनाओं से बचाया जा सके।

सुधाकर आशावादी, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम

संत समाज

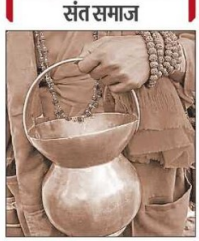

देश के सच्चे संतों को बदनाम न कीजिए

उत्तर प्रदेश के हाथरस की हृदय विदारक घटना ने समूचे भारत को हिलाकर रख दिया है। इस मामले की निष्पक्ष जांच होनी ही चाहिए और दोषियों को कानूनी कठघरे में खड़ा किया जाना चाहिए। मगर भारत एक धर्म-प्रधान देश है। यहां धर्मोपदेश करने वाले संतों को बहुत महत्व दिया जाता है। उन्हें दान देने की भी अपने यहां समृद्ध परंपरा रही है, जिस कारण कुछ छद्म लोग इसमें घुस आते हैं और प्रचार-प्रसार के जरिये आम जनता के बीच बड़ा स्थान बना लेते हैं। कुछ लोग इन्हीं कथित संतों का उदाहरण देकर संपूर्ण संत समाज पर सवाल उठा रहे हैं। उनके मुताबिक, संपूर्ण संत समाज विकृत हो गया है और इसका अब कोई महत्व नहीं। यह सच नहीं है। आज भी अनगिनत साधु लौकिक और पारलौकिक सेवा-कार्यों में तन-मन से जुटे हुए हैं। वृंदावन में ही नंगे पांव दौड़ते हुए, ईश्वर में रमे तमाम संतों को देखा जा सकता है, जो फटेहाल स्थिति में होने के बाद भी स्थितप्रज्ञ हैं। वे मोह-माया से विरत हैं। उनके चेहरे पर कोई सौंदर्य-प्रसाधन नहीं मिलेगा। मनोभाव भी इतने मजबूत कि दैहिक स्थिति की कोई परवाह नहीं। हालांकि, यह स्थिति सिर्फ नहीं है। कमोबेश सभी धर्मस्थलों पर, यहां तक कि सुदूर इलाकों में भी हम ऐसे संतों को देख सकते हैं, जो भजन, कीर्तन, साधना, परोपकार आदि में लगे हुए हैं। मगर दिक्कत यह है कि जिस तरह आग से विचरण करते स्वस्थ जीवों पर एक मरे हुए जानवर की सड़ांध भारी पड़ जाती है, वैसे ही कुछेक अनाचारियों के आगे तमाम महान संतों के बारे में फतवे दे दिए जाते हैं। सच्चे संतों के तप न कभी मलिन हुए हैं और न होंगे। हां, वह दोषी वालों का अपना नजरिया है कि वे कुछ छद्म संतों के नाम पर पूरे संत समाज को बदनाम करने का प्रयास करते रहते हैं।

हमें यह समझना होगा कि सच्चे संत खुद को ईश्वर नहीं, बल्कि ईश्वर का दास बताते हैं, उनकी अनुकंपा की चाह रखते हैं। वे जीव-मात्र से प्रेम करते हैं और भौतिक सुख-सुविधाओं की परवाह नहीं करते। जबकि, पाखंडी और ढोंगी स्वयं को सर्वेसर्वा बताते हैं और स्वयं ही अनुकंपा करने लगते हैं। वे विचित्र वेशभूषा धारण करके, अद्भुत भाव-भंगिमा के साथ टोने-टोटके का खेल खेलते हैं और अनुयायियों को लुभाने का प्रयास करते हैं, ताकि उनसे उनकी जमा-पूंजी हासिल की जा सके। हमें ऐसे फर्जी बाबाओं से दूर रहना चाहिए और उन पुण्य-आत्माओं की खोज करनी चाहिए, जो वाकई में संत हैं। हमारा मानव जीवन भी असल संतों के सान्निध्य में ही सफल हो सकता है, छद्म बाबाओं के सहारे नहीं।

दिनेश सिंह, चिकित्सक

संवाद

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली। शनिवार, 6 जुलाई 2024

क्या चाहता है चीन

व्यवहार से ही साबित होगी असली मंशा

कजाकिस्तान के अस्ताना में शंघाई सहयोग संगठन (SCO) की बैठक के दौरान चीन और भारत के विदेश मंत्रियों के बीच हुई द्विपक्षीय बातचीत को एक पॉजिटिव संकेत तो माना जा सकता है, लेकिन दोनों देशों के रिश्तों में सुधार की ठोस उम्मीद के लिहाज से देखा जाए तो उसके लिए अभी और बहुत कुछ करने की जरूरत है।

बैठक की अहमियत | पहली बात तो यह कि दोनों देशों के विदेश मंत्रियों की मुलाकात इस बीच जरूर हुई है, लेकिन उनकी बैठक एक साल बाद हो रही थी। बैठक की सार्थकता इस बात में भी है कि पहली बार दोनों पक्षों ने महसूस किया, LAC पर गतिरोध का लंबा खिंचना किसी के हक में नहीं है और यह कि 'सीमा पर शांति हमेशा बनानी पड़ती है।' इस लिहाज से दोनों पक्षों में इस बात पर भी सहमति बनी कि कूटनीतिक और सैन्य अधिकारियों की मीटिंग जारी रखी जाए।

विदेश मंत्रियों की बातचीत

गतिरोध बरकरार | देखा जाए तो मई-जून 2020 में सीमा पर कई इलाकों में चीनी सेना के आगे बढ़ आने और गलवान घाटी में भिड़ंत होने के बाद तनावों के बीच भी दोनों पक्षों में बातचीत जारी रही। LAC पर बने गतिरोध को खत्म करने के लिए वर्किंग मेकेनिज्म फॉर कंसल्टेशन एंड कोऑर्डिनेशन (WMCC) की दो दर्जन से ज्यादा बैठकें हो चुकी हैं। कोर कमांडर लेवल पर भी 21 दौर की बातचीत हो चुकी है। कुछ मसले सुलझे भी हैं। लेकिन डेपसांग और डेमचक जैसे पॉइंट पर मतभेद बने हुए हैं, जिसकी वजह से सीमा पर दोनों ओर बड़ी संख्या में सैनिकों की तैनाती बरकरार है।

कितना गंभीर है चीन | सवाल है कि क्या चीनी पक्ष इस बात को लेकर सचमुच गंभीर है कि बातचीत का कोई हल भी निकले। संदेह की वजह यह भी है कि उसकी तरफ से पिछले कुछ समय से लगातार इस बात पर जोर दिया जा रहा है कि सीमा पर जो भी मतभेद हैं उन्हें दरकिनार करते हुए दोनों देशों को आपसी संबंध सामान्य बनाने की ओर कदम बढ़ाना चाहिए। इस पर भारत अपना रुख साफ कर चुका है और उस पर अडिग है कि जब तक सीमा पर जारी गतिरोध को दूर नहीं कर लिया जाता तब तक दोनों देशों के रिश्ते सामान्य हो ही नहीं सकते।

असल मंशा | ऐसे में दोनों विदेश मंत्रियों का यह स्वीकार करना कि 'सीमा पर शांति हमेशा बनानी पड़ती है', इस बात का संकेत माना जा सकता है कि अब दोनों पक्षों में होने वाली बातचीत को फलप्रद बनाने का अतिरिक्त प्रयास दोनों सरकारों की ओर से होगा। लेकिन यह संभावना सच होती है या नहीं और चीन अब सचमुच सीमा पर गतिरोध खत्म करना चाहता है या इस बैठक का मकसद अंतरराष्ट्रीय हलकों में कुछ खास संकेत देने तक सीमित था, यह आगे के उसके व्यवहार से ही स्पष्ट होगा।

दो दूनी चार

सेंसेक्स एक लाख कब...

रमेश तिवारी

सेंसेक्स ने 80 हजार की ऊंचाई छू ली है। इसका पिछले 10 हजार अंकों का सफर अब तक का सबसे तेज रहा है। भारत में शेयर बाजार को ट्रैक करने के लिए सेंसेक्स बेहद अहम इंडेक्स है। अब सबकी नजरें इस पर टिक गई हैं कि यह इंडेक्स एक लाख का लेवल कब छूने वाला है। इकॉनमी से जुड़े जो डेटा सामने आ रहे हैं, वो बता रहे हैं कि वह वक्त जल्दी आने वाला है, उम्मीद से भी ज्यादा तेजी से। फिर भी इस उत्साह के माहौल में चेतावनियों को दरकिनार नहीं किया जा सकता। जैसा कि चीफ जस्टिस ने चेताया है कि मौजूदा हाल मार्केट का सेंटिमेंट तो दिखाता है, लेकिन संतुलन और धैर्य की जरूरत भी है।

क्या तेजी के पीछे सिर्फ निवेशकों का उत्साह वाला फैक्टर है? नहीं। भारत में गठबंधन सरकार को लेकर जो चिंताएं थीं, अब थमती नजर आ रही हैं। ज्यादातर मंत्रियों को उनके पुराने विभाग ही मिले। इससे ये भी साफ हो गया कि सरकार नीतियों में निरंतरता चाहती है। अब सबको पूर्ण बजट का इंतजार है, जो इसी महीने पेश होगा। बाजार के निवेशक चाहते हैं कि वित्तीय स्थिरता के मोर्चे पर मजबूती बनी रहे।

इकॉनमी के मोर्चे पर तरक्की के बावजूद कुछ बातें हैं। प्राइवेट सेक्टर बाजार में भारी निवेश को तैयार नहीं दिख रहा है। ग्रामीण इलाकों में डिमांड को लेकर निराशा दिख रही है। आर्टिफिशल इंटेलिजेंस के आने से इंडस्ट्री बदलाव से गुजर रही है। इस उथल-पुथल का असर थोड़े समय तक रह सकता है। कंपनियों के लिए मॉनसून से बड़ी उम्मीदें रहती हैं। मौसम विभाग ने कहा कि जुलाई में बारिश सामान्य से ज्यादा होने की उम्मीद है। इससे ग्रामीण इलाकों में डिमांड बढ़ेगी। फिलहाल ब्याज दरें ऊंची हैं। समझा जा रहा है कि इस साल के अंत तक ब्याज दरों में कमी की शुरुआत हो सकती है। इससे बाजार में डिमांड बढ़ी तो प्राइवेट कंपनियों का निवेश बढ़ेगा। इस देश में विकास की जो गति है, वो फिलहाल कम ही विकासशील देशों में नजर आ रही है। अर्थव्यवस्था की विकास दर तेज रही तो कॉरपोरेट सेक्टर का मुनाफा भी उसी हिसाब से बढ़ना चाहिए।

शेयरों में रिटेल निवेशकों का पैसा आने से कंपनियों के लिए फंडिंग की दिक्कत नहीं है। वो भी बिजनेस बढ़ा सकते हैं। विदेशी निवेशक भी बाजार को नई ऊंचाई दे रहे हैं। वो फिलहाल यहां आगे भी टिके रहने के मूड में हैं। मई और जून में उन्होंने पैसे निकाले जरूर थे, लेकिन वो कोई ट्रेंड नहीं था। एक ठहराव भर था। भारत में जब कमाई का मौका हो तो विदेशी निवेशक उस मौके से मुंह नहीं मोड़ सकते। अब सवाल है कि क्या सेंसेक्स की ऊंचाई पूरे बाजार का अच्छा हाल बता रही है? मिडकैप और स्मॉलकैप शेयरों के लिए देर सारी चेतावनियां जारी की गई हैं। इसके बावजूद इसमें रिटेल निवेशकों का भरोसा बना हुआ है। उन्हें लगता है कि घर की बचत का ये सही ठिकाना है। लेकिन उन्हें मार्केट में किसी संभावित गिरावट के लिए तैयार रहना चाहिए।

एक फंड हाउस के चीफ इनवेस्टमेंट अफसर का अनुमान है कि अगले तीन वर्षों के दौरान निवेशकों के लिए भारतीय इक्विटी बाजार का रिटर्न उतना अच्छा नहीं रहेगा, जितना पिछले तीन सालों के दौरान रहा है। अगर चाहें तो हम अपनी उम्मीदों पर थोड़ा काबू भी रख सकते हैं।

ऑफ दि ट्रैक

हवा पर पहरे

दिलीप लाल

उमस भरी गर्मी में जब हवा का हल्का-सा भी झोंका टकराता है शरीर से तो कितनी राहत मिलती है। लेकिन, सोचिए कि आप बालकनी में खड़े हैं और फिर भी हवा आपको छू नहीं रही। दरअसल ऐसा हकीकत में हो रहा है और इसकी वजह हैं ऊंची-ऊंची इमारतें। आजकल किसी शहर के कद का अंदाजा उसकी इमारतों की ऊंचाई से लगाया जाता है। लेकिन, यही इमारतें आपकी हवा को पहरे में डाल रही हैं। महानगरों में विंड फ्लो पर इमारतों के प्रभाव को लेकर चीन में एक रिसर्च हुई है। इसकी रिपोर्ट बताती है कि बड़ी-बड़ी बिल्डिंगें, गोदाम, मॉल, शॉपिंग सेंटर हवा की रफ्तार में बाधक बन रहे हैं। 1980 के बाद से पूरे चीन में जबरदस्त निर्माण हुआ। इसके चलते विंड स्पीड में 11% तक की कमी आई है। सबसे बुरा असर पड़ा है शंघाई पर। ग्लोबल फाइनेंशल हब की पहचान रहने वाले इस महानगर में हवा की गति 50% तक कम हो गई है। गर्मियों में जब urban heat island effect होता है, तब हवा की रफ्तार थोड़ी बढ़ जाती है। वजह कि सतह गर्म होने से हवा उससे टकराकर तेजी से ऊपर उठती है। हालांकि इससे कोई राहत नहीं मिलती। हवा पर इमारतों का यह असर शहर दर शहर अलग हो सकता है। यह वहां के लैंडस्केप पर निर्भर करता है। चीन की Nanjing University ने यह रिसर्च की है। फाइंडिंग्स Journal of Advances in Modelling Earth Systems में प्रकाशित हुई है।

ब्रिटेन में लेबर पार्टी की जीत यूरोप में दिख रही लहर के विपरीत है

यूरोप राइट तो UK लेफ्ट क्यों

रहीस सिंह

ब्रिटेन में हुए आम चुनाव में ब्रिटिश मतदाताओं ने 14 वर्षों से सत्ता पर काबिज कंजर्वेटिव्स को बेदखल कर कीर स्टार्मर के नेतृत्व में लेबर पार्टी को बड़ी जीत दिलाई। सेंटर-लेफ्ट लेबर पार्टी को ब्रिटेन में मिली यह जीत अन्य यूरोपीय देशों की राजनीतिक धारा के उलट है। इसलिए सवाल उठता है कि ब्रिटेन सेंटर-लेफ्ट के साथ एक नई सुबह लेकर आया है या नई चुनौतियां? अभी जवाब देना मुश्किल होगा। हां, इतना कहा जा सकता है कि ब्रिटेन अन्य यूरोपीय देशों द्वारा खींची गई लकीरों से कुछ अलग चलने का प्रयास कर रहा है।

ढेर सारे सवाल | ब्रिटेन के मतदाताओं ने कंजर्वेटिव पार्टी को कुछ थके, अनसुलझे और विवादित रहे चेहरों के कारण सत्ता से बाहर किया या बात कुछ और है? यूरोपीय राजनीति में दक्षिणपंथी उभारों और ब्रिटेन में हुए सत्ता परिवर्तन के बीच के विरोधाभासों को किस तरह से देखा जाए? जिस ब्रेक्जिट के लोग साढ़े चार साल पहले तक लेबर पार्टी के 'क्वासी नैशनलिस्ट' और 'क्वासी लिबरल' एजेंडे को खारिज कर रहे थे, आज वे 180 डिग्री क्यों घूम गए?

फेल हुए सुनक | चुनाव पूर्व सर्वेक्षणों ने स्पष्ट कर दिया था कि ऋषि सुनक और उनकी पार्टी बुरी तरह से पराजित होने वाली है। सुनक को ब्रिटेन की जनता ने प्रधानमंत्री नहीं चुना था, वह 'बाई डिफॉल्ट' पीएम बने थे। फिर भी उनसे अपेक्षा की जा रही थी कि वह ब्रिटेन की अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने का प्रयास करेंगे और वर्ष 2016 से विरोधाभासों से जूझती हुई कंजर्वेटिव पार्टी की साख को दुरुस्त करेंगे। लेकिन, ऐसा हुआ नहीं।

चुनौतियों की भरमार | सुनक के नेतृत्व में ब्रिटेन 'Get Brexit Done' को ग्लोरिफाई नहीं कर पाया। चुनौतियां अलबत्ता बढ़ती गईं। पिछले सात दशकों के साथ आगे बढ़े। स्वास्थ्य व्यवस्था, इतिहास में ब्रिटेन में टैक्स की दरें सबसे ज्यादा हो गईं। सरकार के पास लोगों पर खर्च करने के लिए पैसे नहीं हैं, जिसका परिणाम बढ़ते हुए टैक्स के रूप में दिख रहा है। यूक्रेन युद्ध के दौर में जो नीतियां अपनाई गईं, उसके कारण ब्रिटेन में गैस और तेल की कीमतें काफी बढ़ीं। इसका असर आम उपभोक्ता वस्तुओं पर भी पड़ा।

बदलाव की वजह

- इकॉनमी नहीं संभाल पाए सुनक
- यूक्रेन युद्ध से देश पर बोझ बढ़ा
- लेबर पार्टी ने जगाया भरोसा

इकॉनमी क्रैश | सरकार ने एनर्जी संकट से निपटने के लिए उधार लेकर 400 बिलियन पाउंड खर्च कर दिए। बढ़ती महंगाई से निपटने को ब्रिटेन के सेंट्रल बैंक ने ब्याज दरें बढ़ा दीं। इससे एक तरफ इकॉनमी क्रैश हुई, दूसरी तरफ जनता महंगाई और असुरक्षा के दौर से गुजरी। एक बात और, नवंबर 2018 में ब्रिटेन की राजनीति में एक नई पार्टी का प्रवेश हुआ, 'रिफॉर्म यूके'। इसकी और कंजर्वेटिव पार्टी की नीतियां लगभग एक ही जैसी हैं। इसकी बढ़त का सीधा असर कंजर्वेटिव पार्टी पर पड़ा।

वादों का बोझ | कीर स्टार्मर पार्टी को एक नए युग में ले जाने के वादे के साथ आगे बढ़े। स्वास्थ्य व्यवस्था, स्टूडेंट्स और टैक्सपेयर्स के लिए वेलकम पॉलिसी, रोजगार बढ़ाने के लिए नई इंडस्ट्रियल पॉलिसी, टैक्स क्रिएशन के बजाय वेल्थ क्रिएशन पर फोकस के साथ-साथ यूरोप से रिश्ते सुधारने की उनकी घोषणा ने वहां की जनता पर अच्छा प्रभाव डाला है, लेकिन क्या इससे अपेक्षित परिणाम मिलेंगे? क्या आप्रवासन आने वाले समय में एक नई चुनौती पैदा नहीं करेगा?

शरणार्थियों का मुद्दा | ब्रेग्जिट का मुख्य कारण था इमिग्रेशन। ब्रिटेन ही नहीं, पूरे यूरोप में इमिग्रेशन का मुद्दा दक्षिणपंथ को बढ़ावा दे रहा है। ऑस्ट्रिया में हंगरी से आने वाली उन ट्रेनों को रोक दिया गया था, जिनमें शरणार्थी आते थे। यही काम डेनमार्क और स्वीडन ने भी किया था। क्या इस तरह का प्रतिरोध सिर्फ इसलिए है कि एक बड़ी आबादी का आप्रजन आर्थिक दबाव और रोजगार की समस्या लेकर आएगा? या यह भय भी काम कर रहा है कि इस विशाल आप्रजन के साथ यूरोप में इस्लामवाद और आतंकवाद का भी आप्रजन हो रहा था?

इतिहास में जवाब | ब्रिटेन में हुए इस परिवर्तन से लगता है कि यूरोप अपने इतिहास को दोहरा रहा है। अतीत में देखें तो यूरोप भावनात्मक या राजनीतिक रूप से एक नहीं रहा। हां, आर्थिक आवश्यकताओं ने उसमें एकता के तत्वों का संयोजन जरूर किया। इधर के वर्षों में यूरोप में एक नई तरह का एकाधिकारवादी और कट्टर राष्ट्रवादी रवैया पनप रहा है, जिसके कारण न केवल एकता प्रभावित हो रही है बल्कि अन्य कई तरह के खतरे भी जन्म ले रहे हैं। अब देखना है कि नई सरकार ब्रिटेन को पुरानी राहों पर भटकाएगी अथवा नई दिशा दे पाएगी।

(लेखक वैदेशिक मामलों के जानकार हैं)

कहां फंसा AI

आर्टिफिशल इंटेलिजेंस को लेकर यह उम्मीद पाली जा रही है कि इसके चलते मशीनें एक दिन इंसानों से भी आगे निकल जाएंगी। दुनिया की बड़ी टेक फर्म AI में निवेश कर रही हैं। अभी कहां तक पहुंचा है यह सफर, क्या हैं मुश्किलें, जानते हैं :

AI image

पैसों का मामला

5 बड़ी टेक फर्म – Alphabet, Amazon, एपल, मेटा और माइक्रोसॉफ्ट करीब 400 बिलियन डॉलर AI से जुड़े हार्डवेयर, रिसर्च और डिवेलमेंट पर खर्च करेंगी। एक्सपर्ट्स का अनुमान है कि खर्च के मुकाबले कमाई बहुत कम होगी।

इस्तेमाल में कमी

कंसल्टेंसी McKinsey के मुताबिक, बिजनेस प्रॉसेस में AI के उपयोग का डेटा केवल 5% है। ब्रिटेन में सबसे ज्यादा 20% बिजनेस में एआई का इस्तेमाल हो रहा है, लेकिन ग्रोथ रेट हर जगह कम है।

सिक्योरिटी पर चिंता

टेक्नॉलजी ने डेटा की कीमत बेहद बढ़ा दी है, लेकिन साथ में इससे जुड़े खतरे भी बढ़ गए हैं। सबसे बड़ी चिंता डेटा सिक्योरिटी की है। कंपनियों को यह भी डर है कि एल्गोरिदम बायरुड हुआ तो फाइनल फाइंडिंग भी बायस्ड होगी। फास्ट-फूड चेन McDonald's ने हाल में AI के जरिये ड्राइव-थ्रू ऑर्डर का ट्रायल कैंसल कर दिया। वहां सिस्टम गलतियां करने लगा था।

तेजी से बदलाव

AI की दुनिया महंगी तो है ही, तेजी से बदल भी रही। मसलन, large language models से कुछ ही अरसे में vision-language-action model आ गए। ऐसे में कंपनियां उस तकनीक में पैसे फंसाने से बच रही हैं, जो बदल रही है और जल्दी ही पुरानी पड़ जाएगी।

नौकरी का मसला

कंपनियां अभी छोटे टास्क के लिए जेनेरेटिव AI का इस्तेमाल कर रही हैं। लेकिन यह डर है कि AI से बेरोजगारी बढ़ेगी। फिर, Walmart जैसी फर्म ने AI का इस्तेमाल बढ़ाया, पर प्रॉफिट पर खास असर नहीं पड़ा।

5 पॉइंट

प्रस्तुति : शैलेंद्र पांडेय

चलते-चलते...

जटिल धुनों पर तराशे गए गीतों पर तालियां बजना आम बात है। लेकिन अब सहज और कम म्यूजिकल इंस्ट्रूमेंट्स पर सजाई गई धुन और उस पर गाए जाने वाले गीतों का दौर आ गया है। लंदन की क्वीन मैरी यूनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं ने 1950 से 2022 के बीच हर साल यूएस बिलबोर्ड ईयर-एंड रिगिल्स म्यूजिक चार्ट में शीर्ष पांच में रखे गए गीतों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला।

www.nbt.in

स्विस शहर की सफाई का राज़

यूरोप घूमते-घूमाते स्विस ट्रेन से करीब तीन घंटे का सफर तय कर इटली की फैशन सिटी मिलान से स्विट्जरलैंड के ज्यूरिख पहुंचने में शाम के साढ़े चार बज गए थे। बान होफ (यानी रेलवे स्टेशन) के सामने ही गली के मुहाने पर सेंट गोथार्ड होटल में मेरी बुकिंग थी। यही बान होफ स्ट्रासे नामक ज्यूरिख की सबसे रईस शॉपिंग स्ट्रीट है, जो करीब एक किमी लंबी है और सीधे ज्यूरिख लेक तक जाती है। मैंने होटल में चेक-इन किया और कमरे में थोड़ा आराम करके नीचे सड़क पर उतर आया। डिनर किया और सड़क पर पैदल टहलने लगा। सड़क पर कार या कोई अन्य वाहन नहीं चलते, सिर्फ ट्राम दौड़ती हैं। सड़क के बीचों बीच जितनी जगह ट्राम आने-जाने के लिए है, उससे ज्यादा चौड़े फुटपाथ हैं दोनों तरफ। इससे लगता है कि स्विस लोग पैदल बहुत चलते हैं। इसी सड़क पर मैं विंडो शॉपिंग करते और ओल्ड टाउन की गलियों के हेरिटेज और कुदरती नजारों को निहारते चलता जा रहा था।

झील तक गया, दो-चार फोटो खींचीं। लौटते-लौटते रात के 9 बज गए। जून समेत गर्मियों के महीनों में वहां रात 9.30 बजे तक भी अंधेरा नहीं होता। मेरे आगे-आगे एक स्विस युवा युगल बातें करते हुए अपने दो पालतू कुत्तों के साथ पैदल चल रहा था। दोनों कुत्तों के गले में अलग-अलग बंधे पट्टे युवती ने थाम रखे थे। लगा कि वे रोज रात को कुत्तों को यूं ही सैर कराते हैं। तभी मैंने देखा- एक कुत्ता सड़क किनारे पेड़ के नजदीक

खुद अपनी आंख से

अमिताभ स.

गया, युवती ने उसके पट्टे को ढीला कर दिया। कुत्ते ने पेड़ से सट कर पॉटी की। युवती ने अपने पर्स से एक छोटा-सा पूप स्कूपर (शौच उठाने का यंत्र) और गुलाबी रंग का पॉलीथिन का लिफाफा निकाला। वह पेड़ के तने के नजदीक नीचे झुकी और कुत्ते की पॉटी उसमें भर ली। फिर लिफाफे को ऊपर से गांठ लगाई और पाली में थाम कर चल दी। जरा आगे सड़क किनारे स्टील का ऊंचा गोल कूड़ेदान आया। युवती ने पॉटी वाला लिफाफा उसमें फेंक दिया।

पीछे-पीछे चलता मैं देखकर मन ही मन बहुत खुश हुआ कि स्विस लोग अपने शहर की सफाई कायम रखने में कितनी मेहनत करते हैं और सहयोग देते हैं। मुझे समझते देर नहीं लगी कि इसीलिए तो ज्यूरिख दुनिया के 10 सबसे साफ शहरों में आता है। मेरे जेहन में सवाल उठा कि हम ऐसे क्यों नहीं बन सकते या ऐसा क्यों नहीं कर सकते? हमारे यहां तो ज्यादातर लोग अपने कुत्तों को सैर कराने के बहाने सड़क या पार्क में पॉटी कराने के लिए ही ले जाते हैं, ताकि उनके घर गंदे न हों, शहर बेशक गंदा हो जाए।

होटल लौटा, तो मैंने रिसेप्शन पर खड़ी मैडम से पूरे वाकये का जिक्र कर पूछा, 'क्या यहां ऐसा सभी लोग करते हैं, या इक्का-दुक्का ही?' वह जरा भी हैरान हुए बगैर टूटी-फूटी अंग्रेजी में बोली, 'ज्यूरिख में सड़कों-गलियों और सार्वजनिक स्थानों पर कुत्तों समेत पालतू जानवरों को शौच कराने अगर पुलिस ने देख लिया, तो 300 स्विस फ्रैंक जुर्माना देना पड़ता है।' मैंने हिसाब लगाया कि एक स्विस फ्रैंक 95 रुपये का है, तो जुर्माना हो गया 28,500 रुपये! ऊपर से, हमारे देश की तरह वहां रिश्वत देकर सस्ते में छूटने की गुंजाइश नहीं होती, क्योंकि स्विट्जरलैंड भ्रष्टाचार मुक्त देशों में भी एक है।

दो महीने के अंदर हिंदी सीख गए हाथी

इरशाद अली पिछले 30 साल से दुधवा नैशनल पार्क में महावत हैं। हाथियों की परवरिश तो करते ही हैं, उन्हें ट्रेनिंग भी देते हैं और जरूरत पड़ने पर उनका इलाज भी करते हैं। हाथियों के अनाथ बच्चों को पालने के हुनर की वजह से महकमे में उनकी अलग पहचान है। हाल ही में पर्यावरण दिवस पर फॉरेस्ट डायरेक्टर ने उन्हें सम्मानित भी किया। दक्षिण सोनारीपुर में गुलेंट के जंगल में उनकी पालतू हथिनियों, दुर्गा और गौरी के साथ इरशाद अली से ***प्रभात*** *ने मुलाकात की। पेश हैं बातचीत के प्रमुख अंश :*

■ अपनी हथिनियों दुर्गा और गौरी के बारे में बताएं। कठिन हालात में आपने इन्हें पाला और संभाला। वह तजुर्बा कैसा रहा?

अपने झुंड से बिछड़े हुए हाथी के ये बच्चे वन विभाग को नजीबाबाद में मिले और उन्होंने हमें सौंप दिए। दुर्गा 2018 में हमें मिली। तीन महीने की थी। मधुमक्खियों ने उसे बुरी तरह काटा था। मां से अलग होने की उसकी तकलीफ की भरपाई के साथ ही उसके लगातार इलाज की जरूरत थी। ऐसे में हमारे हाथीखाने की रूपकली हथिनी बहुत मददगार साबित हुई। दुर्गा से वह मां जैसा बरताव करती। दुर्गा इतनी बड़ी थी कि उसे नर्म चारा खिलाया जा सकता था। लेकिन, पिछले साल अक्टूबर में आई गौरी की उम्र काफी कम थी और वह कमजोर भी बहुत थी तो उसे दूध पर पालना पड़ा। दिन में आठ बार और रात को पांच बार गाय का दूध और लैक्टोजन मिलाकर पिलाते हैं। रूपकली की तरह ही इस बार दुर्गा उसे अपने साथ लिए रहती है। फिर भी देखिए कि रात के वक्त हाथीखाने के आसपास जब ये बच्चे चर रहे होते हैं, तो दुर्गा भले सो जाए, मगर उपद्रवग रूपकली हरदम जागकर गौरी की रखवाली कर रही होती है। हाथी बहुत तेज दिमाग और संवेदनशील जानवर हैं, तो मुझे लगता है कि उसे पालने के लिए वे सारे एहतियात बरतने जरूरी हैं, जो घर में अपने बच्चों के लिए होते हैं। याद रखने की बात बस ये होती है कि ये भी तो आखिर बच्चे ही हैं। आम बच्चों की तरह ये भी कभी-कभी जिद और शैतानी पर आमादा हो जाते हैं। ऐसे में उनके नखरे उठाना और प्यार से समझाना पड़ता है।

■ इनको जंगल की जिंदगी और दीगर कामों के लायक बनाने की ट्रेनिंग किस तरह देते हैं, सिखाने में कितना वक्त लग जाता है?

जंगल में जाने का सलीका तो खैर साथ के दूसरे हाथियों संग रहते हुए देखते-देखते सीख जाते हैं। जैसे दुर्गा अभी अपनी सूंड हवा में उठाकर मक्खियां भगा रही है तो गौरी भी उसी की तरह सूंड फटकार रही है। हाथीखाने के अलावा जंगल में चरते हुए भी हाथी साथ ही रहते हैं। दूसरे जानवरों की मौजूदगी, तरह-तरह की आवाजों पर प्रतिक्रिया के अभ्यस्त वे बड़ों को देखकर हो जाते हैं। ये मुख्यतः जंगल में गश्त करने और सैलानियों को घुमाने के काम आते हैं और इसी के लिए प्रशिक्षण की जरूरत होती है। इतना काफी होता है कि ये महावत का कमांड और इशारा समझने लायक हो जाएं। ट्रेनिंग के दौरान किसी कमांड के अमल पर शाबाशी के तौर पर हम उन्हें कुछ खाने के लिए जरूर देते हैं, गुड़ या रोटी या कुछ और। हाथी समझदार बहुत होता है, तो सिखाने में ज्यादा वक्त नहीं लगता।

■ आप तो अपने इशारे हिंदी में समझाते हैं। फिर कर्नाटक से लाए गए उन दस हाथियों को कैसे काबू में रखते होंगे?

बहुत मशक्कत नहीं करनी पड़ी। शुरू-शुरू में थोड़ी दिक्कत जरूर हुई, मगर बड़ी जल्दी उन हाथियों ने हिंदी सीख ली। कन्नड़ भाषी महावतों के इशारों को हिंदी वाले इशारों से बदलना था। वे सरक कहते, हम पीछे हट कहते हैं। बैठने के लिए वे बहादी और हम समबढ़ कहते हैं। रुक जाने के लिए दोनों ही जबानों में इशारा थत्-थत् हुं हैं। नाराजगी जताने के लिए हम लोग तेज आवाज में डांटते हैं, कन्नड़ वाले महावत कहते हैं- आक थू। यौर करेंगे तो बहुत ज्यादा अंतर नहीं है दोनों में। फिर भी इतना तो है ही कि हमें कोशिश करनी पड़ी। करीब दो महीने लगे फिर वे हिंदी बोली के इशारे जान गए।

■ और महावत जो बरछी साथ रखते हैं, वह कितनी जरूरी होती है? क्या हाथियों को उससे चोट पहुंचानी पड़ती है काबू करने के लिए?

वह तो सिर्फ डराने के लिए होती है। ज्यादातर उन हाथियों के साथ ही रखी जाती है, जो शैतान होते हैं। हाथी बरछी से डरते हैं, पर यहां कोई बरछियों का इस्तेमाल नहीं करता। इशारा काफी होता है। सीधे हाथियों के साथ तो हम डंडा लेकर चलते हैं। रूपकली की उम्र 68 साल हो गई है। 20 साल से वह मेरे पास है। पर कभी डंडे के इस्तेमाल की जरूरत नहीं पड़ी। हाथी अपने महावत को बहुत मानते हैं। उनकी आवाज और हुंकार का इशारा खूब समझते हैं।

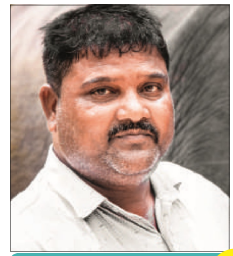

ससाह का इंटरव्यू

इरशाद अली

> हाथी बरछी से डरते हैं। पर यहां कोई बरछियों का इस्तेमाल नहीं करता। इशारा काफी होता है। सीधे हाथियों के साथ तो हम डंडा लेकर चलते हैं। रूपकली की उम्र 68 साल हो गई है। 20 साल से वह मेरे पास है। पर कभी डंडे के इस्तेमाल की जरूरत नहीं पड़ी। हाथी अपने महावत को बहुत मानते हैं। उनकी आवाज और हुंकार का इशारा खूब समझते हैं।

■ खुद आपने हाथियों को बरतना-संभालना कैसे सीखा?

हमारे बड़े अब्बा आबिद अली नैनीताल डिवीजन में महावत थे। रिटायर होने के बाद वह यहीं हम लोगों के साथ रहने लगे थे। उनकी सोहबत में बहुत कुछ सीखा- हाथियों के स्वभाव, खान-पान, बीमारी, दवाई और बहुत कुछ। फिर हाथी को जान लेना ही काफी नहीं, जंगल को जानना भी बहुत जरूरी है। वन विभाग के डॉक्टर हैं, फिर भी वक्त-जरूरत इलाज के लिए जंगली जड़ी-बूटियों की पहचान होना जरूरी होता है। बाघ या गैंडे जैसे जानवरों से सामना होने पर अपना और हाथी का बचाव करने की तरकीबें तजुर्बे से ही आती हैं। लेकिन इसकी बुनियादी तैयारी बुजुर्गों की नसीहतों से होती है। जाहिर है कि उन्होंने ज्यादा दुनिया देखी है, ज्यादा अनुभवी हैं।

■ आप यहां कब आ गए? हाथियों के साथ कितना वक्त बीतता है? कुछ अपने परिवार के बारे में भी बताएं।

मेरे वालिद मुख्तार अली भी यहां महावत थे। उनके इंतकाल के बाद 1994 में मेरी शादी हुई थी, तब से यहीं हूं। दिन-रात हाथियों के अपने कुनबे के साथ ही कटते हैं। घर वालों को और अपने बच्चों को बहुत वक्त कभी नहीं दे पाया। बस यही है कि कभी शाम को घर पहुंच गए, सुबह भाग आए या कभी दिन में गए और उनसे मिलकर लौट आए। अब तो बच्चे भी बड़े हो गए हैं। एक बीटेक करके बेंगलुरू में नौकरी कर रहा है, दूसरा अभी पढ़ रहा है। उनकी दुनिया अलग है, लेकिन मैं तो मानता हूं कि इन बच्चों की परवरिश का मौका मुझे मिला, यह मेरे लिए बेहद खुशकिस्मती की बात है।

रीडर्स मेल

▸ कानूनों का दुरुपयोग न हो

5 जुलाई का लेख 'क्या नए कानूनों से केस जल्दी निपटेंगे' पढ़ा। यह अच्छी पहल है कि मोदी सरकार अंग्रेजों के समय से चले आ रहे कानूनों और न्याय तंत्र में बदलाव करने के लिए प्रयासरत है। समय के साथ हर चीज में परिवर्तन जरूरी होता है। आपराधिक कानूनों में किया गया बदलाव कितना कारगर होगा, यह तो आने वाला समय ही बताएगा। लेकिन, इस बदलाव का दुरुपयोग रोकने के लिए क्या प्रावधान हैं, इस पर चर्चा जरूर होनी चाहिए। कहीं कोई निजी दुश्मनी निकालने या हेरफेरी करने के लिए नए कानून का गलत इस्तेमाल न कर पाए, यह भी सुनिश्चित करना होगा। सुप्रीम कोर्ट ने भी माना है कि दहेज विरोधी कानून का दुरुपयोग भी होता है। ऐसे में यह चिंता स्वाभाविक है कि कानूनों का गलत इस्तेमाल कैसे रोका जाए। दोषियों को सख्त सजा दिलाना जरूरी है, पर यह ध्यान रखना और भी जरूरी है कि कोई बेकसूर न फंस जाए। हमारे देश में पहले से कई तरह के सख्त कानून हैं। सिस्टम में खामियां तलाशने वाले बचने का कोई न कोई रास्ता निकाल लेते हैं। यह बंद करना होगा।

राजेश कुमार चौहान, ईमेल से

▸ पक्ष-विपक्ष की जिम्मेदारी

24 जून से नई लोकसभा का सत्र आरंभ हुआ और 3 जुलाई को समाप्त हो गया। 543 सांसदों से यह अपेक्षा थी कि वे प्रथम सत्र में गंभीरता का परिचय देते हुए देशहित से जुड़े जरूरी मुद्दों पर चर्चा करेंगे। इनसे उम्मीद तो रखी ही जा सकती थी कि हमारे सांसद हंगामे, शोर-शराबे वगैरह में संसद का वक्त खराब नहीं करेंगे। हालांकि ऐसा कुछ हुआ नहीं। सांसदों ने वह सब किया, जो वे हमारी उम्मीदें तोड़ने के लिए कर सकते थे। संसद के पहले सत्र का हाल देखकर संसाद उठता है कि आपसी पक्ष और विपक्ष के बीच भरोसा कैसे कायम हो पाएगा? किस तरह दोनों एक-दूसरे के साथ कामकाजी रिश्ते बना पाएंगे? सियासी तीर चलाने के लिए चुनाव होते हैं, सदन के भीतर दोनों पक्षों को गंभीरता का परिचय देना होगा। एक स्वस्थ लोकतंत्र के लिए यह जरूरी है। आपसी समन्वय, सहयोग और सम्मान से ही देश आगे बढ़ सकता है।

विरेंद्र कुमार जाटव, दिल्ली

आर.एन.आई. नं. 210/2012 संवाधिकार सुरक्षित। विधिक अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। व्यवसायिकता सीमा, प्रतिबंधित राज्य सहायक प्रिंटिंग्स प्रेस, साहस प्रेस, ए-7, ऑद्योगिक क्षेत्र साहिबाबाद और न्यायिक क्षेत्र, ई-28, इंडस्ट्रीयल एरिया साहिबाबाद, गाजियाबाद से मुद्रित। प्रेस : 2330202/2330203। फैक्स: 2340202। टेलीग्राम: नवभारत टाइम्स। वेबसाइट: www.nbt.in। नियंत्रक एवं मुद्रक: । श्री अमरेंद्र नारायण ने मुद्रक मुद्रित। संपादक : । संपादक : ए. पी. सिंह। प्रकाशन : नवभारत टाइम्स (ट्रेडमार्क मालिक) । आवरण पृष्ठ । इस अंक में प्रकाशित समस्त सामग्री के चयन एवं संपादन हेतु पी.बी.आर. पी. एक्ट के अन्तर्गत उत्तरदायी।

ऋषि सुनक

कठोर परीक्षा

ब्रिटेन के चुनाव में प्रधानमंत्री ऋषि सुनक की कठोर परीक्षा है। ब्रिटेन ने 'हाउस आफ कामन्स' में 650 प्रतिनिधि चुनने के लिए मतदान कर दिया है जो अगले प्रधानमंत्री को चुनेंगे। ब्रिटेन इस समय महत्वपूर्ण मोड़ पर है। वह अनेक समस्याओं का सामना कर रहा है जिसमें आर्थिक गिरावट, स्वास्थ्यरक्षा तथा ब्रेक्सिट के बाद पैदा कठिनाइयां शामिल हैं। प्रधानमंत्री ऋषि सुनक ने मतदाताओं से हार्दिक अपील की है कि वे ब्रिटिश राजनीति पर 'लेबर का प्रभुत्व' समाप्त करें। मजेदार बात है कि कंजरवेटिव पार्टी पिछले 14 साल से सत्ता में है, पर उसने अपने वादे ठीक से पूरे नहीं किए हैं। मध्य से दक्षिण की ओर झुकाव वाली कंजरवेटिव पार्टी ने वैश्विक आर्थिक संकट के बीच सत्ता संभाली थी। लेकिन उसका कार्यकाल आर्थिक गतिरोध, सार्वजनिक सेवाओं में गिरावट तथा अनेक घोटालों का शिकार हो गया जिसके कारण उसे वामपंथ तथा दक्षिणपंथ से आलोचना का शिकार होना पड़ रहा है। आम चुनाव ब्रिटिश राजनीति के लिए केन्द्रीय महत्व वाले हैं। इसमें ऋषि सुनक के नेतृत्व में कंजरवेटिव पार्टी कीर स्टार्मर के नेतृत्व वाली लेबर पार्टी का मुकाबला कर रही है। दोनों पार्टियों के देश की समस्याओं पर विचार एक-दूसरे से एकदम उलट हैं। ब्रिटेन अब भी ब्रेक्सिट के कारण पैदा हालात से निपट रहा है जिसके नकारात्मक परिणाम निकले हैं और जिनका खामियाजा जनता व सरकार को समान रूप से भुगतना पड़ा है। एक समय विश्व शक्ति रहा ब्रिटेन आज वैश्विक परिदृश्य में केवल अमेरिका के एक सहयोगी तक सीमित हो गया है जिससे उसके अंतरराष्ट्रीय कद पर गंभीर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। इसलिए वर्तमान संघर्ष केवल संसद में सीटों के लिए न हो कर देश की दिशा के बारे में भी है।

ऋषि सुनक के अभियान में स्थायित्व व निरंतरता की भावनाओं को केन्द्रीय स्थान मिला है। उन्होंने कोविड-19 के पश्चात आर्थिक बहाली समेत ब्रिटेन के समक्ष उपस्थित जटिल चुनौतियों का सामना करने के लिए 'मजबूत शक्ति' की आवश्यकता पर जोर दिया है। इनमें वर्तमान समय में जारी व्यापार वार्तायें तथा राष्ट्रीय सुरक्षा बनाए रखना भी शामिल हैं। मतदाताओं के लिए सुनक का संदेश है कि हमें एकसाथ मिल कर एक मजबूत व ज्यादा समृद्ध ब्रिटेन बनाना चाहिए। सुनक ने लेबर की नीतियों की कटु आलोचना की है जिन्होंने देश को संकटग्रस्त तथा आर्थिक रूप से विभाजित बना दिया है। उन्होंने स्वयं को ऐसे नेता के रूप में पेश किया है जो संतुलित दृष्टिकोण अपनाते हुए रोजगारों की रक्षा के साथ बिजनेस का समर्थन करते हुए यह सुनिश्चित कर सकता है कि आर्थिक प्रगति का रास्ता टिकाऊ बने। कंजरवेटिव घोषणापत्र में कर रियायतों, ढांचागत संरचना में अधिक निवेश तथा आप्रवास व राष्ट्रीय सुरक्षा पर कठोर दृष्टिकोण अपनाने की प्रतिबद्धता पर जोर दिया गया है। यह चुनाव निश्चित रूप से ऋषि सुनक के लिए 'लिटमस टेस्ट' है। वे ब्रिटेन के पहले गैर-श्वेत प्रधानमंत्री बने जिससे उनकी राजनेता के रूप में क्षमता प्रदर्शित होती है। लेकिन इस समय उनके समक्ष सबसे बड़ी चुनौती अर्थव्यवस्था का प्रबंधन तथा लोगों को करों के बोझ से मुक्ति दिलाना है। दूसरी ओर लेबर पार्टी के कीर स्टार्मर ने परिवर्तन व पुनर्जीवन के लिए अभियान चलाया है। स्टार्मर ने कल्याणकारी व्यवस्था में समग्र सुधारों की बात करते हुए कम-आय वाले परिवारों को समर्थन तथा सार्वजनिक क्षेत्र में व्यापक वेतन वृद्धि से जनजीवन का खर्च घटाने का वादा किया है। इस चुनाव के परिणाम न केवल अगली सरकार, बल्कि आगे वाले वर्षों में ब्रिटेन की दिशा भी तय करेंगे।

पाकिस्तान में चरमपंथियों का उभार

पाकिस्तान में आतंकवादी शक्तियों के खतरनाक उभार के कारण 'आपरेशन अज्मे इस्तिहकाम' शुरू किया गया है। इसका उद्देश्य आतंकवाद का सफाया है।

भोपिंदर सिंह
(लेखक, सेवानिवृत्त सेनाधिकारी हैं)

पाकिस्तान में आतंकवादी शक्तियों के खतरनाक उभार के कारण सरकार और पाकिस्तानी सेना द्वारा 'आपरेशन अज्मे इस्तिहकाम' शुरू किया गया है। इसका उद्देश्य आतंकवाद का सफाया है। यह परिघटना पाकिस्तान के लिए बहुत खतरनाक सिद्ध हो रही है। अनेक राजनीतिक-सामजिक विश्लेषकों की राय है कि पाकिस्तानी विमर्श में हमेशा धर्मगुरुओं ने केन्द्रीय भूमिका निभाई है। ऐतिहासिक रूप से 'मुल्लाओं' के व्यापक व अमिट प्रभाव के कारण पाकिस्तान के अनेक संस्थान प्रभावित हुए हैं। इनमें सैनिक अवस्थापना, राजनीतिक पार्टियां, सिविल सोसाइटी, अकादमिया, आदि सभी शामिल हैं। इनमें से प्रत्येक अपने-अपने तरीके से 'शुद्धतावाद' से प्रभावित हुई है। हालांकि इस प्रकार उन्होंने स्वयं को पाकिस्तान या 'शुद्ध लोगों की भूमि' को प्रभावित करने के प्रयास किए हैं। लेकिन यह भी उल्लेखनीय है कि इनमें से अनेक संस्थानों के निजी रूप से उद्देश्य तथा दिशा एकदम विपरीत दिशा में जाती दिखी है। संस्थानों की ये प्रवृत्तियां और दिशायें धर्मगुरुओं की पदानुक्रम वाली व्यवस्थाओं से परिभाषित हुई हैं।

इन संस्थानों ने धार्मिक रूप से ऐसी दिशा अपनाई जिससे न केवल उनके घोषित उद्देश्यों को नुकसान पहुंचा, बल्कि उन्होंने अपनी वैधता और प्रासंगिकता भी एक बड़ी सीमा तक खो दी। इस प्रकार अनेक प्रकार के कट्टरपंथी दृष्टिकोण व विकृतियों का शिकार होने के कारण उनके चरित्र में व्यापक बदलाव आया। 'पैंडोरा पेपर्स' या 'पनामा लिस्ट' में कुख्यात पाकिस्तानी संगठनों की लंबी सूची पर सरसरी नजर डालने से स्पष्ट हो जाता है कि पाकिस्तानी विशिष्ट लोगों की क्या स्थिति रही है। ऐसे विशिष्ट तत्व सार्वजनिक रूप से सरलता, कम खर्च, ईश्वर के प्रति भय तथा ईमानदारी का प्रदर्शन करते रहे, पर इनकी वास्तविक स्थिति एकदम विपरीत थी। इस प्रवृत्ति के कारण पाकिस्तानी अभिजात वर्ग का कुख्यात दोमुंहापन सामने आया जो अपनी अवैध रूप से एकत्रित संपत्तियों के कारण शानदार स्थिति में थे, बल्कि दुनिया में अनेक हिस्सों में अन्याय और अत्याचार का कारण भी बने थे। इसके साथ ही वे अपने देश में धार्मिक अतिवाद व जहरीले ढंग से विकृत धार्मिकता का प्रचार भी करते थे।

जहां सभी चीजें झूठ पर आधारित हों वहां धर्म का आवरण जनता को भरमाने के लिए बहुत जरूरी सिद्ध हुआ है। इसके माध्यम से वे अरब के शेखों या तुर्कों पर निर्भर होते गए। इसके लिए 'इस्लामी देशों के भाईचारे' का नाम लिया गया। वर्तमान समय में पाकिस्तान में सत्तारूढ़ 'शरीफ परिवार' तथा सामंती 'भुट्टो परिवार' स्वयं को धार्मिक रूप से आदर्श दिखाते हैं, पर इसके साथ ही वे पश्चिमीकृत जनरलों के लिए बेचैनी भी पैदा करते हैं जो लगातार जनता के गुस्से का सामना कर रहे हैं।

इन राजनीतिक परिवारों की दोमुंही रणनीति के कारण पाकिस्तानी सैनिक अवस्थापना लगातार गुस्सा, लंबी दाढ़ी वाले, हथियारबंद और मदरसों में शिक्षित नौजवान कबीलाइयों के गुस्से का शिकार बन रही है। आज संभवत: पाकिस्तानी अभिजात वर्ग की यह क्षमता स्पष्ट हो गई है कि वह अपना वर्चस्व बनाए रखने के लिए यह दुहरा खेल खेलने में सक्षम है। पाकिस्तानी अभिजातों ने न केवल जनता को चरमपंथी बनाया है, बल्कि उनको 'ओलिव ग्रीन' या सेवकों के रूप में विस्तार दिया गया है। लेकिन ऐसे लोग अब किसी का आदेश मानने को तैयार नहीं हैं और सबसे बुरी बात है कि वे अपने 'पालकों' के खिलाफ भी उठ खड़े हुए हैं। 'तालिबान' जैसे संगठन चालाक राजनेताओं, अनैतिक जनरलों तथा बेलगाम धर्मगुरुओं का संयुक्त उत्पाद हैं, लेकिन अब वे अपने ही आकाओं से आदेश लेने को तैयार नहीं हैं। वैसे तो 'तालिबान' जैसे उत्पाद निर्यात बाजार के लिए तैयार किए गए थे, पर अब उनको फिर अपने ही देश में आयात किया जा रहा है। पाकिस्तानी अभिजात वर्ग ने अंतत: समझ लिया है कि वह 'अच्छे तालिबान' और 'बुरे तालिबान' में अंतर नहीं कर सकता है और वे सभी केवल 'तालिबान' हैं। इसका कारण प्रशासन में धर्म को अत्यधिक व्यापक स्थान मिल गया है।

आतंकवाद ने पाकिस्तान को 'भीतर से' ऐसे तत्वों के माध्यम से जकड़ लिया है जो उसे लगातार एक 'दुष्ट राज्य' में बदल रहे हैं। अब अभिजात लोगों की समझ में आ गया है कि उनको न केवल आतंकी तत्वों से सीधे निपटना होगा, बल्कि उसे वह 'आक्सीजन' भी बंद करनी होगी जिससे ये तत्व फलते-फूलते हैं। इस प्रकार की आक्सीजन पाकिस्तानी यथार्थ के हर क्षेत्र में धर्म पर अत्यधिक जोर देने के रूप में सामने आई है। हालांकि, अभिजात वर्ग ने पहले भी कई बार परोक्ष रूप से आतंकवाद पर हमला बोला है, पर इसके बावजूद यह फल-फूल रहा है। अब पाकिस्तानी अवस्थापना ने 'आपरेशन अज्मे इस्तिहकाम' शुरू किया है जिसका उद्देश्य आतंकवादियों तथा धार्मिक अतिवादियों का सफाया कर समग्र व व्यापक रूप से समाज को चरमपंथ से मुक्त करना है। लेकिन यह करने की तुलना में कहना ज्यादा आसान है क्योंकि 'धार्मिकता' की जड़ें बहुत गहरी हो गई हैं। 'अति-धार्मिकता' के नकारात्मक प्रभावों की यह स्वीकार्यता महत्वपूर्ण है, हालांकि आने वाला समय ही बतायेगा कि यह इच्छा वास्तव में गंभीर है या केवल दिखावा है।

इससे इस्लामाबादी राजनीतिक पार्टियों की भूमिका घटेगी जिनमें मौलाना फजलुर रहमान की जमीयत उलेमाए इस्लाम है। इसके साथ ही अनेक मिलिशियाओं या नस्ली संगठनों की भूमिका भी कम होगी जो जनता में फैल गए हैं। ऐसी पार्टियों ने न केवल विदेशी 'वहाबीवाद' व 'सलाफीवाद' का आयात किया है, बल्कि वे यह सुनिश्चित करने में लग गई हैं कि पाकिस्तानी 'अवस्थापना' अशांत क्षेत्रों में आतंक-विरोधी कार्रवाइयां धीमी करे। पाकिस्तान के प्रति निष्ठा तथा नागरिकों की सुरक्षा जैसी बातें करने के साथ ही वे सैनिक कार्रवाइयां न करने की पैरवी भी करते हैं। इस प्रकार वे कुंए और खाई के बीच फंस गए हैं क्योंकि अब सत्तारूढ़ गठबंधन का हिस्सा न होने के कारण पाकिस्तान सरकार उनकी बात मानने को तैयार नहीं है।

तहरीके तालिबान पाकिस्तान-टीटीपी जैसे संगठन भी उनकी सुनने को तैयार नहीं हैं क्योंकि वे ज्यादा आक्रामकता के साथ धार्मिक व चरमपंथी संगठनों का समर्थन प्राप्त कर रहे हैं। लेकिन इसके बावजूद ये धार्मिक पार्टियां एकजुट होकर 'आपरेशन अज्मे इस्तिहकाम' के खिलाफ 'प्रतिरोधी आंदोलन' खड़ा करने की तैयारी कर रही हैं, हालांकि उनके साथ ज्यादा साझीदार नहीं हैं। आर्थिक रूप से पाकिस्तान को 'विफल राष्ट्र' के दर्जे से बाहर निकालने वाली शक्तियां धार्मिक पार्टियों के एजेंडों के खिलाफ हैं। इनमें चीन, अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष, विश्व बैंक, पश्चिमी देश और यहां तक कि अरब के शेख भी शामिल हैं।

खासकर चीन पाकिस्तान को 'विफल राष्ट्र' के खांचे से बाहर निकालना चाहता है क्योंकि उसने वहां भारी निवेश किया है। पाकिस्तान के तथाकथित 'आयरन ब्रदर' चीन ने चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारे-सीपीईसी में 62 बिलियन डालर से अधिक धनराशि का निवेश किया है। ये इस क्षेत्र को किसी प्रकार भी धार्मिक-अतिवादी बलूच विद्रोहियों के कब्जे में नहीं जाने देना चाहते हैं जो चीनी हितों पर अपने 'पवित्र अधिकारों' के नाम पर हमले कर रहे हैं। बलूच विद्रोहियों या 'राष्ट्रवादियों' का मानना है कि चीन उनकी भूमि के संसाधन लूट रहा है और इसी कारण वे उसका विरोध कर रहे हैं। मध्यपूर्व के देशों का जुड़ाव 'मुस्लिम ब्रदरहुड' तथा मिस्र, जार्डन, कुवैत व सऊदी अरब में उससे जुड़े संगठनों से है। वे भी इस मामले में एकजुट हो गए हैं।

अब काबूल की तालिबान सरकार बाहरी शक्तियों से संबंध सुधार रही है और वह पाकिस्तानी 'खैरात' पर निर्भर नहीं रह गई है। अफगानों ने पाकिस्तान में मदरसों से पढ़े नौजवानों के साथ अपने ऐतिहासिक समीकरण ठीक किए हैं। इन सबसे पाकिस्तान में धार्मिक पार्टियों की प्रासंगिकता घट रही है।

यदि पाकिस्तानी इस अवसर का लाभ उठाना चाहें तो वे आतंकवाद व अतिवाद का मुकाबला कर अपनी ऐतिहासिक गलतियों से मुक्ति पा सकते हैं। लेकिन यह काम आसान नहीं है और 'आपरेशन अज्मे इस्तिहकाम' तथा पाकिस्तानी अवस्थापना द्वारा उसके समर्थन पर नजर रखनी होगी।

एससीओ सम्मेलन में सामरिक गतिशीलता

"जैसे-जैसे चीन एससीओ के भीतर अपना प्रभाव जमाता जा रहा है, भू-राजनीति का परस्पर प्रभाव तेजी से दिखाई दे रहा है।"

कुमारदीप बनर्जी
(लेखक, नीति विश्लेषक हैं)

शंघाई सहयोग संगठन या एससीओ ने इस सप्ताह राष्ट्राध्यक्षों की अपनी 24वीं बैठक आयोजित की। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, जिन्हें द्विपक्षीय और बहुपक्षीय मंचों पर भारत को महत्वपूर्ण सहयोगी के रूप में बढ़ावा देने के लिए जाना जाता है, ने अपने देश में संसदीय जिम्मेदारियों का हवाला देते हुए इस क्षेत्रीय वार्ता को छोड़ दिया। हालांकि, कई लोग यह भी बताते हैं कि पाकिस्तान और चीन के साथ तंडे रिश्ते, जिनके दोनों शीर्ष नेतृत्व एससीओ शिखर सम्मेलन के लिए मौजूद थे, उन कारणों में से एक था जिसके कारण पीएम मोदी ने कजाकिस्तान के अस्ताना की यात्रा करने से परहेज किया। शिखर सम्मेलन के लिए भारत का प्रतिनिधित्व विदेश मंत्री एस जयशंकर ने किया, जहां उन्होंने कई एससीओ मध्य एशियाई सदस्य देशों के साथ अलग-अलग द्विपक्षीय बैठकें कीं।

यूरेशियन अंतर-सरकारी समूह के रूप में एससीओ की घोषणा जून 2001 में चीन में की गई थी। भारत और पाकिस्तान 2017 में पूर्ण सदस्य के रूप में एससीओ में शामिल हुए। वर्तमान में, एससीओ में 9 सदस्य देश, 3 पर्यवेक्षक देश और 14 संवाद साझेदार हैं, जो उभरते आर्थिक भूगोल के एक पूरे क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो वर्तमान भू-राजनीतिक विकास के रंगमंच पर कब्जा करते हैं। रूस और चीन के साथ चार पड़ोसी मध्य एशियाई देश इसके संस्थापक सदस्य हैं।

हालांकि बाद में ईरान के सदस्य के रूप में शामिल होने के साथ ही कुवैत, कतर, मिस्र, सऊदी अरब, तुर्की, बहरीन, ट्यूनीशिया और मालदीव संवाद साझेदार के रूप में शामिल हो गए, जिससे यह देखा जा सकता है कि वर्तमान भू-राजनीतिक परिदृश्य को आकार देने के लिए ग्लोबल साउथ एक महत्वपूर्ण मंच क्यों है। रूस यूक्रेन के साथ लंबे समय से युद्ध में उलझा हुआ है, जबकि मध्य पूर्व और पश्चिम एशिया के अधिकांश देश इजरायल-हमास युद्ध में घनिष्ठ रूप से शामिल हैं।

अमेरिकी नियंत्रण को चुनौती दे रहा है। अस्ताना ग्लोबल साउथ शिखर सम्मेलन की तैयारी में, चीनी सरकारी मुखपत्र ग्लोबल टाइम्स ने शिखर सम्मेलन के गुणों की प्रशंसा करते हुए कुछ रिपोर्टें छापीं।

चीन के रेनमिन विश्वविद्यालय में वित्तीय अध्ययन के लिए चोंगयांग संस्थान के वरिष्ठ शोधकर्ता झोउ रोंग ने लिखा, यह पश्चिमी दुनिया को संदेश देता है कि उभरती अर्थव्यवस्थाओं से कई अलग-अलग आवाजें हैं जिन्हें सुनने और प्रतिनिधित्व करने की आवश्यकता है, और वैश्विक सहयोग की मुख्यधारा की प्रवृत्ति उनके अवरोध से उलट नहीं जाएगी। चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग ने कजाकिस्तान और ताजिकिस्तान की दो राजकीय यात्राओं के साथ एससीओ शिखर सम्मेलन को भी जोड़ा, जिससे मध्य एशियाई राज्यों में इसके पदचिह्नों का विस्तार हुआ। राज्य मीडिया ने वैश्विक दर्शकों को याद दिलाया कि कजाकिस्तान, वह जगह है जहां 2013 में चीन की बेल्ट एंड रोड पहल प्रस्तावित की गई थी। जिसने पिछले दशक में चीन को भूमि से घिरे मध्य एशिया में रणनीतिक बुनियादी ढांचे के पदचिह्न सुरक्षित करने में कामयाब किया।

कुछ विश्लेषकों के हवाले से ग्लोबल टाइम्स ने रिपोर्ट किया मध्य एशिया, **ज़्ज़** के कार्यान्वयन में प्रमुख क्षेत्रों में से एक के रूप में, इस बात का ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत करता है कि कैसे चीन द्वारा प्रस्तावित वैश्विक सार्वजनिक अच्छाई भूमि से घिरे क्षेत्र को भूमि से जुड़े क्षेत्र में बदल रही है, इसे यूरेशियन महाद्वीप को जोड़ने वाले पुल में बदल रही है। पिछले एक दशक में पीएम मोदी का फोकस मध्य और पश्चिम एशिया रहा है। भले ही पीएम मोदी ने असताना शिखर सम्मेलन से परहेज किया हो, लेकिन उम्मीद है कि वे राष्ट्रपति पुतिन के साथ 'यूक्रेन के बाद' द्विपक्षीय बैठक के लिए रूस की यात्रा करेंगे, उसके बाद ऑस्ट्रिया में रुकेंगे, जो लगभग चार दशकों में पहली बार होगा। राष्ट्रपति पुतिन और पीएम मोदी, जो दोनों चुनाव के बाद सत्ता में लौटे हैं, के साथ बैठक पर बारीकी से नजर रखी जाएगी, क्योंकि यह यूक्रेन युद्ध के बाद पश्चिमी देशों द्वारा रूस के अलग-थलग पड़ने के बाद पहली आमने-सामने की बैठकों में से एक होगी।

यह पहली ऐसी बैठक भी होगी, जिसमें गाजा पर चल रहे इजरायल के हमले और संघर्ष से ग्रस्त, कोविड के बाद की दुनिया में विकसित हो रही भू-राजनीतिक स्थिति सहित क्षेत्रीय मुद्दों पर चर्चा होने की संभावना है। क्षेत्रीय मंच के नजरिए से, भारत चीन और रूस भी ब्रिक्स में निकटता से बातचीत करते हैं। अगले कुछ हफ्तों में होने वाली बातचीत पर बारीकी से नजर रखी जाएगी।

आप की बात

सोरेन की रणनीति

हेमंत सोरेन ने जेल से जमानत पर रिहा होते ही आनन फानन में पिर से मुख्यमंत्री पद संभाल लिया है। उधर केजरीवाल जेल में बंद होने के बावजूद मुख्यमंत्री बने हुए हैं। जो कि एक हास्यास्पद स्थिति है। सिर्फ कुर्सी मोह के कारण केजरीवाल ने सत्ता पर अपनी पकड़ बनाए रखने के लिए लोलुपता की पराकाष्ठा कर दी है। हालांकि, हेमंत सोरेन का जल्द से जल्द मुख्यमंत्री बनना यह दर्शाता है कि कर्सी से दूर रहने की विरह वेदना असह्य होती है। भले ही ईडी सुप्रीमकोर्ट में उनकी जमानत के खिलाफ अर्जी लगा रही है, मगर लगता है कि केजरीवाल की तर्ज पर हेमंत सोरेन भी अब पिर से जेल जाने पर भी मुख्यमंत्री पद नहीं छोड़ेंगे। वर्तमान समय में हर वक्त हर उच्च पद पर बैठे व्यक्ति की टांग खींचने के लिए उनके ही अपने लोग तैयार बैठे रहते हैं। बिहार के जीतनराम मांझी इसके उदाहरण हैं, जब नीतीश के कहने पर उन्होंने उनके द्वारा दिया मुख्यमंत्री पद छोड़ने से इनकार कर दिया था। अरविंद केजरीवाल को यह विश्वास नहीं है कि यदि वे अपने स्थान पर किसी को मुख्यमंत्री बना दें तो वह फिर उनके लिए कुर्सी खाली कर देगा। शायद हेमंत सोरेन को भी यही डर सता रहा होगा और इसी कारण उन्होंने मौका मिलते ही फिर मुख्यमंत्री बनने की रणनीति अपनाना ज्यादा पसंद किया।

-सुभाष बुडावन वाला, रतलाम

सुधा मूर्ति का सुझाव

सांसद सुधा मूर्ति ने राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू के अभिभाषण के पश्चात् धन्यवाद प्रस्ताव पर कहा कि सरकार जब कोविड के समय उससे बचाव के लिए लोगों को टीके लगाने का अभियान विशाल स्तर पर चला सकती है तो महिलाओं में होने वाले सर्वाइकल कैंसर से बचाव के लिए भी बड़े स्तर पर टीकाकरण अभियान चलाया जाना चाहिए। महिलाओं को कैंसर से बचाना जरूरी है ताकि परिवार की खुशी बरकरार रहे। पति को तो दूसरी पत्नी मिल सकती है किन्तु बच्चों को दूसरी माँ मिलना मुश्किल है। उन्होंने महत्वपूर्ण मुद्दा उठाया जिसकी सोशल मीडिया पर तहे दिल से तारीफ़ हो रही है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने धन्यवाद प्रस्ताव का जवाब देते हुए उसमें सुश्री सुधा मूर्ति के सुझाव का उल्लेख किया। इसका सुश्री मूर्ति ने खड़े होकर व हाथ जोड़ कर स्वागत किया। सुधा मूर्ति का यह सुझाव जन-समस्याओं के प्रति एक जागरूक महिला का दृष्टिकोण प्रदर्शित करने के साथ ही अनेक सांसदों को आईना दिखाने का काम भी करता है। यदि सभी सांसद राजनीतिक व चुनावी रणनीति के चलते आरोपी-प्रत्यारोपों के बजाय रचनात्मक भूमिका निभायें तो उनका सम्मान बढ़ेगा तथा भारत को विकसित देश बनाने में सहायता मिलेगी।

- शकुंतला महेश नेनावा, इंदौर

भगदड़ से सबक

भगदड़ से देश में कई बार तमाम लोगों की जानें चली गई। हाल ही में हाथरस में एक बाबा के सत्संग में मची भगदड़ के कारण 124 लोगों की जान चली गई। भगदड़ की इस तथा इसके पहले हुई घटनाओं से समुचित सबक लेकर मानक प्रक्रिया या प्रोटोकाल विकसित करने की जरूरत है। समय की मांग है कि इस तरह के आयोजनों के लिये सरकार उपयुक्त रणनीति बनाये। इस तरह के आयोजन के लिये आयोजकों को प्रशासन से मिल कर व्यवस्था करनी चाहिये ताकि लोगों को आने-जाने में कोई परेशानी न हो तथा किसी संकट के समय उनको सुरक्षित रूप से बाहर निकाला जा सके। यह भी तत्काल सुनिश्चित करना जरूरी है कि यदि बंद स्थल या खुले मैदान में प्रशासन द्वारा स्वीकृत संख्या से अधिक लोग आएं तो उस आयोजन को फौरन स्थानीय स्तर पर रद्द किया जाना चाहिए। यह बात खासकर धार्मिक आयोजनों पर लागू होती है क्योंकि कई बार स्थानीय प्रशासन इनके खिलाफ सक्रिय कार्रवाई नहीं कर पाता है। उम्मीद है कि हाथरस जांच के लिए गठित पूर्व न्यायाधीश की अध्यक्षता वाला आयोग इस संबंध में समुचित सुझाव देगा। इन सुझावों के आधार पर मानक प्रक्रिया तैयार कर उसका कठोर क्रियान्वयन सुनिश्चित होना चाहिए।

-कुलदीप मोहन त्रिवेदी, उन्नाव

नए आपराधिक कानून

नए आपराधिक कानून कई नई तकनीकों और एआई या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के आ जाने के बाद बहुत ही आवश्यक थे। ऑनलाइन सुनवाई, बयान लेने व सभी अदालती कार्यवाहियों में उत्कृष्टतम तकनीक को मान्यता देने से तीव्र गति से सटीक जांच हो पाएगी। इसके कारण होने वाले निष्पक्ष और सूक्ष्म-विश्लेषण से न्यायाधीशों को फैसला लेने में बड़ी सुविधा होगी। नई तकनीकों के प्रयोग तथा फोरेंसिक विशेषज्ञता के अधिकाधिक उपयोग से विभिन्न एजेंसियां अधिक सटीकता और शीघ्रता से अपराधियों के खिलाफ साक्ष्य खोज पाएगी। लेकिन इसके लिए पुलिस, प्रशासन, फोरेंसिक और न्यायालय प्रक्रियाओं की तत्परता भी बढ़ानी होगी। पुलिसजनों की तकनीकी क्षमताओं को बढ़ाने तथा उनको लैपटाप व अन्य आवश्यक उपकरणों से लैस करने के साथ ही तीव्र आवागमन की व्यवस्था भी करनी होगी। फॉरेंसिक लैबों की कमी को दूर करने के साथ लैबों में आधुनिक उपकरणों की मौजूदगी और विशेषज्ञों का प्रशिक्षण भी जरूरी होगा। नए कानूनों के त्वरित क्रियान्वयन से तस्वीर बदलेगी।

- विभूति बुपक्या, खाचरोद

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से responsemail.hindipioneer@gmail.com पर भी भेज सकते हैं।